अभिनव इमरोज़

Abhinav Imroz

प्रेम-प्रोत्साहन-प्रतिभा का प्रतीक

ISSN 2321-1105

वर्ष-14, अंक-04, अप्रैल 2025

www.abhinavimroz.com

बाबा साहब डॉ. भीमराव अम्बेडकर जयंती के अवसर पर गौतम बुद्ध विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. राणा प्रताप सिंह एवं विश्वविद्यालय के स्टाफ के साथ पुष्प अर्पित करते हुए प्रणाम मुद्रा में.....

वनवास

जिसे चाहा
वह जिंदगी से ग़ैर हाज़िर होता चला गया।
इस ग़ैर हाज़िर की तलाश
एक लुप्त छाया सा सच बन गयी।
क्योंकि यहाँ हाज़िर है
एक ऐसी मौत
जो अहंकार के कूड़ा डम्प से निकल
नुकीले कैक्टस के भयावह गुलदान बाँटती है ।
अकेली और अनचाही मौत
सामूहिक और बलात् हो जाती मौत।
यहाँ मौत के ब्रह्मास्त्रों की खोज
एक प्रतियोगी दौड़ बन गयी।
अब उसका परमाणु तांडव
इन्सान की समाप्ति के लिए
सिर चढ़ बोल रहा है।
धमकियाँ और चुनौतियाँ
अपनी डरावनी केंचुल से बाहर आ
सबको लील रही हैं।
जो जंग सदियों से
आदमी के अंदर चल रही थी,
उसे बौना बना रही थी,
उसकी निकृष्टता को उपलिब्ध मान रही थी,
वह फूटते हुए बमों की आवाज़,
के बरस जाने के हवाई सायरनों में बदल गयी।
सरे मैदान सही मूल्यों की हत्या हो गयी,
सबकी हस्ती मिटा देने का संकल्प
भयावह अंधड़ में तब्दील हो गया।
अंधड़ उठा और विजेता बेचारा हो गया।
हिमालय सा ताज पहन लेने की उसकी इच्छा
छिछली हो खलनायक बन गयी,
अपने सपनों के खून से लथपथ हो गयी।
अपनी ही हत्या की हत्यारी बन गयी।
यह हत्यारा किसी की नहीं सुनता,

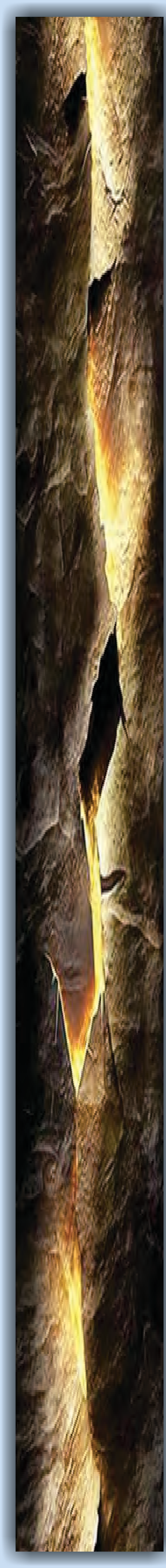

दोगलों की भी नहीं
इस दोगलेपन ने हर जनपथ को
टूटा फुटपाथ बनाया,
बहुमंजिले प्रासादों से अंधेरा उतारा,
और परमाणु बमों के विस्फोट का
डरावना एहसास सच बना।
इन्सानियत ने आखिरी हिचकी ली,
मासूम बच्चे बीमार बूढ़े बन गये।
देखो, लाखों लोग एक और घर की
तलाश में निकले हैं,
क्षितिज से उगते अंधेरे सूरज के साये तले,
हर रोशनी को जलावतन करते हुए,
नयी प्रभात को भूतिया रात सम डोलते हुए।
इस रात में भटकते लोग
सवाल नहीं उठा सकते।
भुखमरी सूचकांकों को लांघ
क्षत-विक्षत जिस्मों की नुमाइश बन जाते हैं।
इन काफिलों के साथ
एक अहंकारी अट्टहास चलता है,
इन्हें और दयनीय बना देता है।
एक देश को अपनी जेब में
डाल लेने की इच्छा
खूनी होली बन गयी,
उसके हर रंग में कालिख है.
सतरंगे इन्द्रधनुष को वनवास देती कालिख।
इस इन्द्रधनुष के खो गये रंगों की
तलाश कब करोगे, तुम?

प्रो. सुरेश सेठ,
जलंधर (पंजाब), मो. 98153 55055

साभार: 'धूप के साये में', कुलदीप सलिल,
नई दिल्ली, मो. 98100 52245

है जो कुछ पास अपने सब लिए सरकार बैठे हैं, जो चाहें आप ले जाएँ, सरे बाज़ार बैठे हैं ।

मनाओ जश्न मंज़िल पर पहुँच जाने का तुम लेकिन ख़बर उनकी भी लो यारो, जो हिम्मत हार बैठे हैं ।

तू अब उस शहर भी जाकर सुकूँ पाएगा क्या आख़िर, वहाँ भी कौन-से ऐ दिल तेरे ग़मख्वार बैठे हैं ।

न तू आया, न याद आई तेरी इक लम्बे अरसे से, हज़ारों काम होने पर भी, हम बेकार बैठे हैं ।

उन्हीं से नाम है तेरा, न भूल इतना तो ऐ साक़ी, तेरे मयखाने में अब भी कुछ इक ख़ुद्दार बैठे हैं ।

गए वो वक़्त कहते थे कि इतने दोस्त हैं अपने, मुकद्दर जानिए अच्छा, अगर दो-चार बैठे हैं ।

किसी भी वक़्त आ सकता है अब पैग़ाम बस उसका, सुना जिस वक़्त से हमने, सलिल तैयार बैठे हैं

प्रकाशन कार्यालयः
बी 3/3223 वसंत कुंज,
नई दिल्ली.110070
दूरभाष : 09910497972
e-mail: abhinavimroz@gmail.com
dk.bahl1942@gmail.com,
facebook: facebook.com/abhinavimroz
website : abhinavimroz.page

Paytm PhonePe

इस अंक में

प्रो. रामस्वार्थ ठाकुर	*विचार पुँज*	4
संपादकीय, देवेन्द्र कुमार बहल		5
धर्मवीर भारती	*कहानी*	6
क़मर मेवाड़ी	*कहानी*	9
डॉ. निशा नंदिनी भारतीय	*कहानी*	11
वीणा विज 'उदित'	*कहानी*	15
सुदर्शन प्रियदर्शिनी	*कविता*	19
श्रीभगवान दीक्षित	*कहानी*	20
नीना अंदौत्रा	*कहानी*	26
देवेश आदमी	*नाटक*	30
शहाब ख़ान 'सिफ़र'	*कहानी*	32
केदारनाथ सविता	*कहानी*	37
रमेश कुमार 'रिपु'	*कहानी*	38
अशोक दर्द एवं डॉ. जसप्रीत कौर फ़लक	साक्षात्कार	44

कृपया अपनी रचनाएँ केवल
abhinavimroz@gmail.com
पर हीं भेंजें।

Bank Account Details

डी. के. बहल, A/c No. 520101222134565
युनियन बैंक, वसंत कुंज, नई दिल्ली 110070
IFSC Code : UBIN0905381

संपादन–संचालन अवैतनिक/रचनाओं की जिम्मेदारी लेखकों की प्रकाशित लेखादि में अभिव्यक्त विचारों से प्रकाशक–सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं। समस्त विवादों के लिए, न्यायालय क्षेत्र दिल्ली।

स्वत्वाधिकारी मुद्रक एवं प्रकाशक श्री देवेन्द्र कुमार बहल की ओर से डिकोरपेक इण्डिया प्रा. लि., 291–डी, सेक्टर–6, आई.एम.टी. मानेसर, गुरुग्राम, हरियाणा से छपवा कर बी–3/3223 वसंत कुंज, नई दिल्ली – 110070 से प्रकाशित। संपादक, देवेन्द्र कुमार बहल

प्रो. रामस्वार्थ ठाकुर

सेवा से मनुष्य बहुत कुछ दूर्लभतर प्राप्त कर सकता है। वस्तुतः सेवा से ही प्रेम का जन्म होता है। सेवा सत्कर्म है। सेवा से ही व्यक्ति सेव्य/स्वामी के पास/निकट/समीप पहुँचता है। इसी कारण आध्यात्मिक साधना में ''सेवक-सेव्य'' भाव को विशेष स्थान/महत्व /वाक्य/कथन/ उक्ति है।

'सेवक सेव्य भावबिनुभव न तरिय उदगार'।

मानस, तुलसी

प्रेम सेवा का ही सुफल है। सच्चा प्रेमी ही सच्चा सेवक भी होता है या सत्यनिष्ठ सेवा से ही वास्तविक प्रेम का उदय होता है। आध्यात्मिक साहित्य/कृतियों में इसका विशद वर्णन और निरुपण मिलता है। गोस्वामी तुलसीदास के रामचरितमानस में रामानुज भरत के परमोज्जवल प्रेम का सांगोपांग चित्रण है। गोसाई जी ने भरत को प्रेम मूर्ति/प्रेम मूरति भी कहा है। यहाँ चित्रित भरत का प्रेम राम के प्रति उनकी एकनिष्ठ सेवा को ही दर्शाता है। गोसाई जी की तो यहाँ तक मान्यता है। सेवा के बिना प्रेम और प्रेम के बिना ज्ञान निरर्थक है। *''सोह न राम प्रेम बिनु ग्यानु।'' मानस ....*

मोतिहारी, मो. 9123419601

संपादकीय

*शुरुआत के किसी एक अंक का यह मेरा पुराना संपादकीय है जिसमें मैंने लेखकों, पाठकों और उभरती हुई प्रतिभाओं से 'अभिनव इमरोज़' के कारवां में शामिल होने का आवाहन किया था। 2025 में आयोजित कहानी प्रतियोगिता के अवसर पर इस संपादकीय के माध्यम से एक बार फिर कहानी रचनाकारों को प्रोत्साहित करने का प्रयास किया है। प्रत्येक अंक में 2 क्लासिक कहानियाँ देनी आरंभ कर दी हैं ताकि नवोदितों को अच्छी कहानी की पेचेदिगियों से वाक़िफ कराया जा सके। – **संपादक***

''नई मंज़िल, नई राहें, नया है मेहरवां अपना''

'अभिनव इमरोज़'= नया एक दिन, यूनानी दार्शनिक हैराक्लाईटस का कहना है कि आप एक ही नदी में दोबारा पाँव नहीं डाल सकते– दूसरी बार पाँव डालने तक वह नदी भी बदल चुकी होगी और आप भी। नदी की भांति हमारा भी हर दिन नया होता है। हर रोज़ नए सवाल, नए इम्तिहान और नए जवाव ढूंढने की कोशिश जारी रहती है। हर नए दिन में सफलताएँ और असफलताएँ भी, नई राहें और नए-नए मेहरवां तलाशने का सिलसिला निरंतर चलता रहता है। कई आज के बिछुड़े अगले आज में मिल जाएंगे, यह आशा भी बनी रहती हैं। 'अभिनव इमरोज़' की सरिता भी प्रकृति की रोज़ नए होने के स्वभाव को साथ लेकर निकली है– इस का हर एक अकं नए-नए प्रतिभाशाली लेखकों और कलाकारों से हमारा परिचय कराने में प्रयत्नशील रहेगा।

'अभिनव इमरोज़' का सफर शुरु हो चुका है। इसे नए-नए प्रतिभाशाली लेखकों और प्रबुद्ध पाठकों के रूप में नए-नए हमसफर मिलेंगे। हमें दोनों की ज़रुरत है और इन दोनों के बीच संतुलन बनाए रखने के लिए सलाहकारों का मार्गदर्शन भी चाहिए। हम इस छोटे से जीवन को भरपूर जी सकते हैं बशर्ते हम अपनी संकल्प शक्ति से अंतर्निहित शक्तियों का शत-प्रतिशत इस्तेमाल करें।

आओं - परस्पर संवाद से आगे बढ़ें और नए आज के दिन का स्वागत् करें।

-यह तो आप मानेंगे ही कि प्रोत्साहन संजीवनी है, लेकिन यह उन्हीं को अनुप्राणित करती है जहां आत्मविकास, महत्वाकांक्षा और जिज्ञासा का रुधिर नसों में वह रहा हो। मुर्दों (प्रतीक) में भी जीवन डाला जा सकता है बशर्ते जीने, जीतने और जूझने की प्रबल इच्छाशक्ति मन में स्थित हो। आप शायद सहमत हों कि कुछ तो हम प्रोत्साहन पाने के लिए करते हैं और कुछ प्रोत्साहन पा कर करते हैं। अगर प्रोत्साहन पाने के लिए किए गए प्रयास का परिणाम उम्मीद से कम हो तो हम निराश हो जाते हैं और अगर प्रोत्साहन पा कर की गई कोशिश न काम भी हो जाए तो हम हताष नहीं होते अपितु चुनौति को स्वीकार कर दुगुने आक्रमक जोश से जूझ पड़ते हैं।

आओ अपनी सृजनशीलता को पहचानें, पढ़ें, पचाएँ और लिखें। किसी प्रबुद्ध लेखक से मार्गदर्शन पाएँ और साकारात्मक संवाद से जीवन का उत्सव मनाएँ, अपनी अभिव्यक्ति को हर नए 'आज' में परिष्कृत होने का अवसर दें, साहित्य की विविध विधाओं से कुछ भी चुन लो साहित्य सागर के किनारे आई किसी भी लहर के संग हो लें– कलम और कल्पना की पतवार बना अपनी कहानी और कविता को दूर तक ले जा सकते हो, किसी भाषा की रचना को अनुदित भी कर सकते हो। किसी रोचक हादसे को भी पाठकों से सांझा कर सकते हो। पहल तो केवल डूबंकी से करनी होगी- हौंसले खुदबखुद बुलन्द हो जाएँगे और पार पा जाना सरल होता जाएगा। अश्क साहब के शब्दों में:

अरे डूबना सागर में यदि, पा जाना है पार
तो फिर व्यर्थ प्रतिक्षा किसकी, कैसा सोच विचार
बहने दे, नौका बहने दे, लहरों को अपनी कहने दे
यह पतवार– इसे रहने दे।

कहानी

एक पत्र

धर्मवीर भारती

बहुचर्चित लेखक एवं सम्पादक डॉ. धर्मवीर भारती 25 दिसम्बर, 1926 को इलाहाबाद में जनमे और वहीं शिक्षा प्राप्त कर इलाहाबाद विश्वविद्यालय में अध्यापन-कार्य करने लगे। इसी दौरान कई पत्रिकाओं से भी जुड़े। अन्त में 'धर्मयुग' के सम्पादक के रूप में गम्भीर पत्रकारिता का एक मानक निर्धारित किया।

डॉ. धर्मवीर भारती बहुमुखी प्रतिभा के लेखक थे। कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, निबन्ध, आलोचना, अनुवाद, रिपोर्ताज़ आदि विधाओं को उनकी लेखनी से बहुत-कुछ मिला है। उनकी प्रमुख कृतियाँ हैं— साँस की कलम से, मेरी वाणी गैरिक वसना, कनुप्रिया, सात गीत - वर्ष, ठण्डा लोहा, सपना अभी भी, सूरज का सातवाँ घोड़ा, बन्द गली का आखिरी मकान, पश्यन्ती, कहनी अनकहनी, शब्दिता, मानव - मूल्य और साहित्य, अन्धा युग और गुनाहों का देवता।

भारती जी 'पद्मश्री' की उपाधि के साथ ही 'व्यास सम्मान' एवं अन्य कई राष्ट्रीय पुरस्कारों से अलंकृत हुए।

4 सितम्बर, 1997 को मुम्बई में देहावसान।

डियर राबर्ट,

सुना है तुम कामन्स की बैठक में बंगाल के अकाल की जाँच की माँग करनेवाले हो। सोफ़ी के पास आये हुए पत्र से यह मालूम हुआ कि तुम्हारा विचार है कि अकाल की घटनाओं से भारत में असन्तोष फैलने की सम्भावना है और तुम्हें सन्देह है कि कहीं उससे युद्ध-प्रयत्नों में बाधा न पड़े।

तुम्हारे इस सन्देह से केवल यही मालूम होता है कि तुम भारत की असली हालत से कितने अपरिचित हो। तुम्हें शायद यह नहीं मालूम कि हिन्दोस्तान की युग-युगों की सभ्यता और संस्कृति ने यहाँवालों को इतना सहनशील बना दिया है कि तुम इसका अन्दाज़ा भी नहीं कर सकते। हिन्दोस्तानियों के धर्म में उपवास रखना और भूखों मरना एक साधना है, आध्यात्मिक निष्ठा है। इस बंगाल के उपवास से भारत की आत्मा पवित्र हो रही है, समझे। हिन्दोस्तानी अपमान और बेइज़्ज़ती की ठोकरें खाकर बहादुरी से शहादत की मौत मर जाते हैं; उनके लिए गेहूँ और रोटी का कोई सवाल ही नहीं उठता।

फिर भी, तुम्हारी दिलचस्पी के लिए मैं एक भूख की मौत का हाल लिखता हूँ, वह मौत जो तुम्हारी समझ में यहाँ ग़दर मचा देती, लेकिन जो खुद हिन्दोस्तानियों की निगाह में एक पानी के बुलबुले से अधिक महत्त्व नहीं रखती।

जाड़े के दिन थे - सुबह का वक़्त। यकायक मेरा कुत्ता बुरी तरह भूकने लगा। मैंने ओवरकोट डाला और मैं बाहर आया। दूर पर बिजली की मद्धिम रोशनी में कुछ भिखमंगे चले आ रहे थे। सबसे आगे एक छोटा-सा लड़का था, क़रीब ग्यारह वर्ष का और तुम्हें यकीन न होगा, वह जंगली बिलकुल नंगा था। रूखे-रूखे बाल, पीला चेहरा, बुरी तरह फूला हुआ पेट और लकड़ी की तरह पतली टाँगें। उसके पीछे दो बुड्ढे थे। एक की लम्बी दाढ़ी में कीचड़ लगा हुआ था और दूसरे का एक पैर किसी बीमारी से फूल गया था। उनके पीछे तीन औरतें थीं, जिनके लिबास का हाल लिखना अश्लीलता होगी। उसमें से एक अभी कम उम्र की लड़की थी। एक तरफ़ उसके बालों ने और दूसरी तरफ़ उसके बच्चे ने उसकी छातियाँ ढक रक्खी थीं। यह हिन्दोस्तानी औरतों के पहिनावा का तरीक़ा है, जिसकी इतनी तारीफ़ तुम कर रहे थे, जब तुमने पेरिस में जूली को

सारी पहिने देखा था। और जानते हो उसकी यह हालत क्यों थी? इसलिए नहीं कि उसको कपड़े नहीं मिल सकते थे, बल्कि इसलिए कि इस तौर से नंगे रहने पर उसे शायद आसानी से भीख मिल सकती थी। सबसे पीछे एक जवान आदमी था, जो धीमे-धीमे कराह रहा था, और दोनों हाथों से अपने पेट को दबाये था। शायद वह ज़्यादा खा गया था, क्योंकि तुम्हें यह नहीं मालूम कि हिन्दोस्तानी भिखमंगे कितने लालची होते हैं।।

मेरे घर के आगे हिन्दोस्तानी मुसलमानों की एक क़ब्रगाह है। पहले मैंने सोचा शायद क़यामत का दिन आ गया है और क़ब्रों के पत्थरों को तोड़कर ये मुर्दे न्याय के लिए जा रहे हैं, क्योंकि तुम उनकी शक्लों से ज़िन्दगी का कोई भी चिह्न नहीं पा सकते थे। लेकिन उसी समय एक ऐसा वाक़या हुआ कि मुझे विश्वास हो गया कि वे ज़िन्दा हैं। मैं अपनी नन्ही बेबी के लिए चॉकलेट लाया था और उस पर लिपटा हुआ काग़ज़ राह में पड़ा था। आगेवाला नंगा लड़का अपनी पतली-पतली टाँगों पर झुका और लपककर वह टुकड़ा उठा लिया। पल भर उसे अजीब भूखी निगाहों से देखा और बड़े चाव से चाटा। और फिर चारों ओर निगाह घुमाकर झट से उसे निगल गया। मुझे बहुत ताज्जुब हुआ - हिन्दोस्तानी काग़ज़ भी खाते हैं शायद करेन्सी नोट भी खा जाते होंगे। पर आजकल तो यहाँ काग़ज़ पर भी नियन्त्रण है।

खैर, तो वे इतने धीरे-धीरे चल रहे थे कि एक बिजली के खम्भे से दूसरे तक आने में उन्हें कम से कम बीस मिनट लगे होंगे। शायद वे सचमुच भूखे और कमज़ोर थे।

वह जवान भिखमंगा मेरे सामने रुका, शायद कुछ माँगने के इरादे से। तुम नहीं जानते कि मुझे इन भिखमंगों से कितनी नफ़रत है। मैंने फ़ौरन अपने कुत्ते को इशारा किया और वह झपटा। भिखमंगा भागा और लड़खड़ाकर गिर गया। कुत्ते ने अपने दाँत गड़ाये लेकिन मैंने उसे वापस बुला लिया- मेरा कुत्ता बहुत समझदार है - वह हिन्दोस्तानी नस्ल का है और नेटिव कुत्ते बहुत ही वफ़ादार होते हैं। मैंने भी उसे खिलाकर इतना मोटा कर दिया है जैसे कोई हिन्दोस्तानी सेठ या पुलिस का दरोग़ा जिनकी तस्वीरें तुमने 'किपलिंग' की किताबों में देखी होंगी।

वह आदमी ज़ोर-ज़ोर से कराह रहा था। ठण्ड से उसका बदन जकड़ गया था और वह उठने की बेकार कोशिश कर रहा था। उसके साथी पल भर रुके, उन्होंने एक ख़ूनी निगाह से उसकी ओर देखा, अजीब तौर से सर झटका और रेंगते हुए आगे चले गये, उसे मरता हुआ छोड़कर। यह उनके लिए साधारण-सी बात हो गयी थी।

वह लड़की रुकी। उसने अपने बच्चे को ज़मीन पर रख दिया। मुझे उस पर तरस आ रहा था और शायद मैं उसकी कुछ मदद भी करता अगर मैं एक अँग्रेज़ न होता क्योंकि एक अँग्रेज़ के लिए हिन्दोस्तानियों की मदद करना अपमानजनक समझा जाता है। मुझे विक्टोरिया कॉलेज में हिन्दोस्तानी विद्यार्थियों के सामने 'सौन्दर्य का देश - भारत' विषय पर भाषण देना था; मैं उसकी तैयारी करने लगा।

शाम को जब मैं वापस आया, तो देखा वह आदमी चुपचाप पड़ा है। वह औरत कहीं चली गयी थी। आधे घण्टे में वह लौटी। उसकी गोद में बच्चा था और एक हाथ में एक सड़ी रोटी का टुकड़ा, और केले के छिलके। वह पास आयी और उस आदमी से कुछ कहा। उसने कुछ जवाब न दिया। पास में नाली धोने का नल था। उस लड़की ने अपना पल्ला भिगोया और उसके मुँह में दो बूँदें निचोड़ीं - पल भर रुकी और फिर वह रोटी का टुकड़ा उसके मुँह में डाल दिया। फिर भी आदमी कुछ न बोला, न हिला-डोला। उस औरत ने अपना सूखा हाथ उस आदमी की पसलियों पर रक्खा-उसके बाद उठी-पल भर चुप रही और उसके बाद सूखे गले से सुबकने लगी। वह आदमी मर चुका था।

औरत ने बच्चे की बाँह पकड़ी और रेंगते हुए सड़क के दूसरे किनारे पर सर थामकर बैठ गयी। जैसे उसने कोलतार से बनी हुई उस पतली सड़क को ज़िन्दगी और मौत की विभाजन रेखा समझ लिया हो।

वह आदमी निश्चेष्ट पड़ा था। उसके अधखुले मुँह पर मक्खियाँ भिनभिना रही थीं और मुँह में से आधी रोटी झूल रही थी। वह ऐसा मालूम पड़ता था जैसे सर चार्ल्स नेपियर का बयान किया हुआ हिन्दोस्तानी बाज़ीगर जो अपने मुँह से अजीब-अजीब चीज़ें निकाल देता है।

अँधेरा छा गया; वह औरत वहीं बैठी रही। रात को ऐसा मालूम हुआ कि टामी ठण्ड से कूँ-कूँ कर रहा है। रोज़ी ने उसे अपने बिस्तरे पर बुला लिया। पर वह आवाज़ बन्द न हुई। मैंने खिड़की खोलकर बाहर झाँका-ग़ज़ब की सर्दी थी, हिन्दोस्तान उतना गर्म मुल्क नहीं जितना तुम समझते हो। यहाँ काफ़ी सर्दी पड़ती है जिसका असर तुम हिन्दोस्तानियों की सर्ददिली में देख सकते हो 1

वह औरत सड़क के उस किनारे से इस किनारे पर आ गयी थी। पता नहीं किस ताक़त के सहारे उसने ज़िन्दगी और मौत के बीच की उस सड़क को पार कर लिया था, वह भी इस भूख और सर्दी में। उसका बच्चा भूख और सर्दी से कुनकुना रहा था। मेरी नींद उचट गयी थी। मैंने देखा, वह औरत उठी, उस मुर्दे के पास गयी

और उसके मुँह से निकला हुआ रोटी का सड़ा टुकड़ा उस बच्चे के हाथ में दे दिया। बच्चा उसे खाने लगा, वह उसके मुर्दा बाप की देन थी - वह रोटी का सड़ा टुकड़ा, मुर्दे के मुँह से निकला हुआ। यक़ीन मानो राबर्ट।

बच्चे ने फिर चीखना शुरू किया। औरत फिर उठकर मुर्दे के पास गयी। उस पर से उसका वस्त्र, जो एक फटा हुआ बोरा था, उठा लिया। मुर्दा वस्त्रहीन हो गया, पर फिर औरत झिझकी और काँपी - और टाट उसी पर डाल दिया। बच्चा काँप रहा था और पसलियों में सर्दी से जमे हुए कफ़ की घरघराहट साफ़-साफ़ सुनाई पड़ी थी। वह मुर्दे की बग़ल में बैठ गयी और आधा टाट अपनी ओर खींच लिया। उसने नीचे बच्चे को ढाँककर दुबका दिया और बग़ल में खुद लेट गयी। एक ओर मुर्दा, बीच में बच्चा, और दूसरी ओर माँ - यह एक बंगाली परिवार था।

मुझे नींद आ रही थी। मैं सो गया। सुबह लाश उठाने की गाड़ी आयी। मुर्दा भरते वक़्त मालूम हुआ बच्चा दो लाशों के बीच में था। माँ भी फिर सोकर उठी नहीं। उन्होंने माँ की लाश और बच्चे को बीच सड़क में छोड़ दिया। गाड़ी में जगह नहीं थी। शायद मुर्दों ने, बिना सरकार की असुविधा का ध्यान रक्खे, ज़्यादा से ज़्यादा संख्या में श्मशान - यात्रा का निश्चय कर लिया था।

मैंने तुम्हें बताया है कि मेरे घर के आगे एक क़ब्रिस्तान है। और उस क़ब्रिस्तान के सामने एक सिख रेजीमेण्ट का पड़ाव। कभी-कभी तो चाँदनी में सफ़ेद क़ब्रों और सफ़ेद तम्बुओं में फ़र्क़ ढूँढ़ना मुश्किल हो जाता है। ख़ैर, गेहूँ और रसद की एक लारी उस ओर जा रही थी। सड़क पर लाश पड़ी हुई थी। लारी रुक गयी, फ़ौजी उतरे और बन्दूक के कुन्दों से लाश को एक ओर हटा दिया। लारी चल दी। पर वह बेचारा बच्चा लारी के पिछले पहियों के नीचे आ गया-पच्च - एक दर्दनाक - सी आवाज़ हुई - एक खून का फव्वारा छूटा और एक बड़ा-सा धब्बा वहाँ फैल गया। उस बच्चे की अंतड़ियाँ टायरों में फँसी रह गयीं और दूर तक लहू की लाल रेखा खिंच गयी।

पीछे से कुछ आहट हुई। मैंने मुड़कर देखा। रोज़ी गुस्से से तमतमायी हुई खड़ी है। वह चीखकर बोली- "लारी रुकवाओ !" मैंने उसे आहिस्ते से समझा दिया कि इसमें ड्राइवर का क्या क़सूर। बच्चे को दबने के पहले चीखना चाहिए था। दबने के बाद चीखना बच्चे की नासमझी थी - रोज़ी भी कभी-कभी तुम्हारी तरह भावुक हो जाती है।

यह एक अदना-सा वाक़या है। तुम ख़याल कर रहे होगे इससे बड़ी नाराज़गी फैली होगी - जाँच-कमीशन बैठा होगा-आन्दोलन मचा होगा।

यह सब कुछ नहीं मेरे दोस्त ! सामने रहनेवाली बंगाली लड़कियाँ उसी खुशी और सज-धज से कॉलेज गयीं, बग़ल के सेठ जी का रेडियो उतनी ही सुरीली आवाज़ में हापुड़, मेरठ और दिल्ली के गेहूँ के भाव बतलाता रहा - किसी पर कुछ भी असर न हुआ। सिर्फ़ उस गुलाम धरती पर खून की रेखा खिंच गयी और उसे भी मुसाफ़िरों के जूतों की रगड़ ने मिटा दिया।

यह यहाँ की हालत है। तुम्हारा विचार बिलकुल ही ग़लत है। उम्मीद है तुम अपनी भावुकता को छोड़ दोगे और कामन्स में फ़िज़ूल के सवाल न पूछोगे। क्योंकि, उनसे हिन्दोस्तानियों में तो नहीं, सम्भव है अँग्रेज़ों में ही कुछ असन्तोष फैले; और यह युद्ध - प्रयत्नों में बाधक हो।

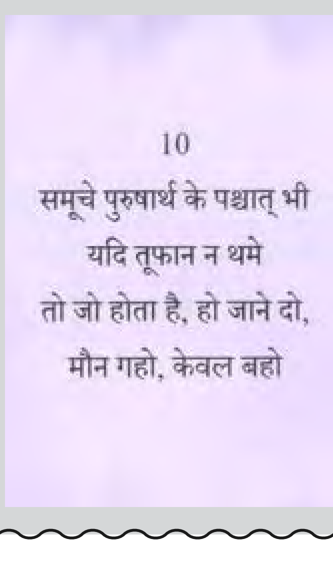

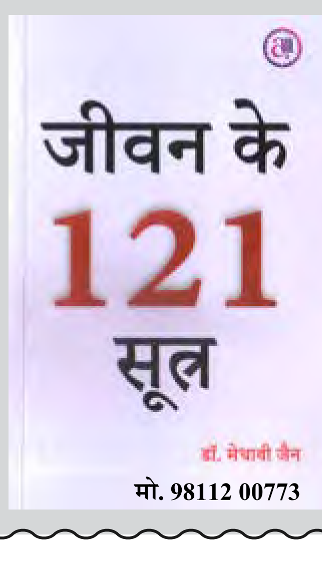

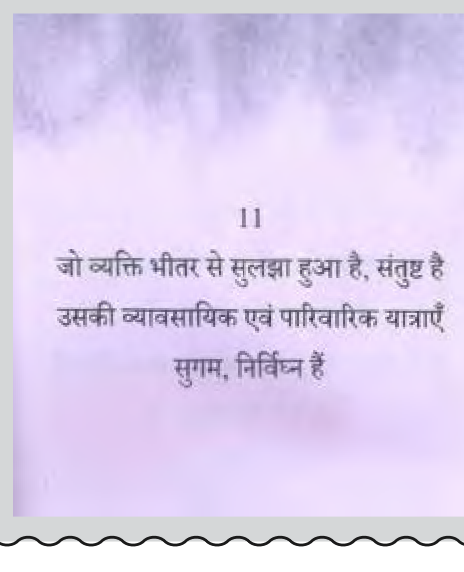

कहानी

ऊँचे क़द का आदमी

क़मर मेवाड़ी

दरअसल घर आजकल उन्हें काटने को दौड़ता है। वे जब भी घर में होते, हड़बड़ी में रहते। वे जल्द घर से निकल भागने का बहाना तलाशते रहते। पहले कभी ऐसा नहीं होता था। वे जब घर में होते तो दफ्तर को भूल जाते। उन्हें अच्छी तरह याद है, दफ़्तर में उन्हें कभी घर याद नहीं आया।

लेकिन यह बहुत पुरानी बात है। जब से वे रिटायर हुए हैं जिंदगी का सिलसिला ही गड़बड़ा गया है। अब वे जब घर में होते हैं तो दफ्तर और बाहर होने पर घर उन पर हावी रहता है।

यह घर जिसे उन्होंने अपने जवानी के दिनों में बनाया था। जिसका नाम प्रसिद्ध वकील पिता के नाम पर रखा था और जिसमें मस्ती व उमंगों भरे खुशगवार दिन गुजारे थे, अब उन्हें भुतहा महल लगने लगा था।

उम्र के अन्तिम दौर में उन्हें यह दिन भी देखने थे। वे जब घर से बाहर होते तब अनेक आशंकाओं के झंझावातों से घिरे रहते। उन्हें ख़्याल आता कि पत्नी अचानक बीमार हो गई है और मुहल्ले वाले उसे अस्पताल ले जाने की तैयारी कर रहे हैं। कभी उनके ख़्यालों में बेटा उभर आता जो स्कूल की छुट्टी के बाद घर लौटते हुए दुर्घटनाग्रस्त हो गया है। ऐसा कोई ख़्याल आते ही वे तेज-तेज कदमों से घर की ओर चल पड़ते। लेकिन घर पहुँचते ही जब वे देखते कि पत्नी उनके लिए शाम का खाना बना रही है और बेटा गली में अपने दोस्तों के साथ गिल्ली-डण्डा खेल रहा है। तब उनके जान में जान आती। वे तसल्ली से अपने कपड़े उतारकर खूंटी पर टाँग देते, फिर लुंगी पहनकर पलंग पर पसर जाते और लम्बी-लम्बी साँसे लेने लगते।

शाम का खाना खा चुकने के बाद घर फिर उन्हें अपनी गिरफ्त में ले लेता। पर वे मजबूर थे। रात में घर छोड़कर कहीं जाना उनके लिए काफी दुश्वार था। आँखों की रोशनी के धुंधला जाने की वजह से वे रात की मटरगश्ती से आज़ाद हो गए थे।

अगर आँखों की रोशनी कम न होती, बीमार पत्नी और एक अदद बेटे की बेड़ी से वे जकड़े न होते तो घर क्या, वे इस शहर को ही अलविदा कह देते।

उन्हें रात भर नींद नहीं आती। वे बिस्तर पर पड़े-पड़े कल्पनाओं के ताजमहल बनाते और बिगाड़ते रहते। और सुबह होने का बड़ी बेसब्री से इन्तजार करते।

वे एक बुलन्द किरदार के इन्सान थे। हालात के थपेड़ों ने उन्हें शंकित जरूर कर दिया था। लेकिन उनका दिमागी तवाजन बरकरार था। वे शायराना तबीयत के मालिक थे। अदबी महफिलों और सभा सम्मेलनों में उनका कलाम उनके व्यक्तित्व में चार चाँद लगा देते थे। उनके अशआर एक खुशबूदार ताजा हवा के झोंकों की तरह सबको मुअत्तर कर देते थे। वे साफ दिल के बेबाक इन्सान तो थे ही, हुब्बुल वतनी के जज्बे से भी सरशार थे।

शादी-ब्याह में वे बढ़-चढ़कर भेंट देते और साथ वालों को शर्मिन्दा कर देते। एक बार एक दोस्त की माँ के निधन पर उसके यहाँ मातमपुर्सी के लिए गए। दोस्त उनके सामने फूट-फूटकर रोने लगा, तो वे बोल पड़े, 'अब बस भी कर ... बहुत हो चुका... नाटक क्यों करता है।' दोस्त को अचानक लकवा मार गया। वहाँ बैठे सब लोग सन्न रह गए कि उन्होंने यह क्या कह दिया।

लेकिन उन्हें मालूम था कि दोस्त कितना कमीना है। जब माँ ज़िन्दा थी तो अपने पति के साथ किराए के मकान में रहती थी और दोस्त ने अपनी माँ को कई बार जूतों से पीटा था, और आज जब मर गई तब फूट-फूटकर रो रहा है। हकीकत में उन्हें दोगले किस्म के लोगों से बेइन्तेहा नफरत थी।

मुझे एक घटना याद आ रही है। पाकिस्तान ने युद्ध छेड़ दिया था। जिला कलक्टर ने एक मीटिंग में सभी सरकारी कर्मचारियों से एक-एक दिन का वेतन देने की अपील की।

वे खड़े हुए। अपने खास अन्दाज में अपना एक पसन्दीदा शेर सुनाया। फिर पूरे माह की तनख्वाह 'राष्ट्रीय सुरक्षा कोष' में देने की घोषणा के बाद सैनिकों के साथ अग्रिम मोर्चे पर जाकर युद्ध में भाग लेने की पेशकश भी कर दी। पूरा हॉल तालियों की आवाज़ से गूँज उठा था।

लेकिन इधर उनका अम्नो सुकून गायब है। जब से वे रिटायर हुए हैं सब कुछ गड़बड़ा गया है। दो साल हो गए लेकिन अब तक उनका पेंशन केस नहीं सुलझा। मंगल को जब मैं टहलने के लिए निकला तो उनसे मुलाकात हो गई।

वे हमेशा की तरह घर से निकलकर मुक्ति की साँस ले रहे थे।

हम कमला नेहरू अस्पताल तक घूमकर झील की तरफ निकल गए। इरिगेशन पार्क की खूबसूरती ने उनका मन मोह लिया। वे खुश-खुश दिखने लगे लेकिन पार्क की मखमली दूब पर एक जगह गन्दगी देखकर उनके चेहरे पर तनाव आ गया। उन्होंने एक गन्दी गाली हवा में उछाल दी। दरअसल उन्हें लोगों की गैर-जिम्मेदाराना हरकतों से बड़ा कष्ट होता था। हम पार्क से निकल आए। अब हम अदब की छतरी में बैठे थे।

उन्होंने बदन से शेरवानी उतारी। माचिस और सिगरेट का पैकेट निकाला। शेरवानी को समेटकर एक तरफ रख दिया। फिर सिगरेट जलाकर हवा में छल्ले बनाने लगे।

इस उम्र में उनकी इस अदा ने मुझे रोमांचित कर दिया। सिगरेट के दो-तीन कश लेने के बाद वे मुझसे बोले,

आपका रिटायरमेंट कब का है?"

अभी काफी वक्त है। " मैंने कहा।

'कुछ समझ में नहीं आता क्या करूँ। दो साल गुजर गए। पेंशन का एक धेला तक नहीं मिला। '

“ दिक्कत क्या है?" मैंने जानना चाहा।

“यही तो मालूम नहीं। जब एक ऑब्जेक्शन की पूर्ति करके फाइल भेजी जाती है, तब तक दूसरे रिमार्क के साथ छः माह बाद फाइल वापस पेंशन विभाग से लौट आती है। " उन्होंने जवाब दिया।

अच्छा यह बात है। "

" जी हां। "

आप दफ्तर में किसी से बात करते। " मैंने सुझाया।

'किससे बात करूँ? जिन लोगों के साथ दफ्तर में इतना वक्त गुजारा, खाया-पिया, दुख-दर्द में साथ दिया, क्या उन लोगों की कोई जिम्मेदारी नहीं ? उनके लहजे में गुस्सा था।

“ जिम्मेदारी तो है उनकी लेकिन उनसे मिल लेने में क्या हर्ज है?"

मैंने कहा।

"हर्ज तो कुछ भी नहीं। लेकिन मिलने पर भी क्या होगा। करेंगे तो वे अपनी मर्जी का। देखता हूँ कितने दिन तक वे यह खेल मेरे साथ खेलते हैं।

वे कुछ देर रुके, उन्हें खाँसी का दौरा पड़ गया। वे व्यवस्थित हुए और बोलने लगे, “मुझे किसी ने कहा है कि बड़े बाबू को दो हज़ार भेंट चढ़ा दो। सारा काम निपट जाएगा। अब आप ही जवाब दीजिए। जिस आदमी ने जिंदगी भर ईमानदारी और नेकदिली से अपना फर्ज पूरा किया हो अब वह अपने ईमान को दागदार करेगा ? क्या मुझे अपना हक हासिल करने के लिए भी रिश्वत देनी होगी? सच अर्ज कर रहा हूँ। मर जाऊँगा लेकिन रिश्वत नहीं दूँगा।

गुस्से से उनके चेहरे का रंग बदल गया था। माहौल में ठण्डक बढ़ गई थी। उन्होंने शेरवानी को उठाया। उसे पहना और चलने को तैयार हो गए।

अब हम धीमे-धीमे क़दमों से वापस लौट रहे थे। हमारे बीच मौन पसर गया था। रास्ते में हम दोनों में से कोई कुछ नहीं बोला। जैसे ही हम बस स्टैण्ड के चौराहे पर पहुँचे, तपाक से उन्होंने मुझसे हाथ मिलाया और अपने घर की तरफ चल दिए।

उनसे मिले पूरे आठ दिन गुज़र गए। पिछले मंगल को हम साथ-साथ घूमने गए थे। आज फिर मंगलवार है। लेकिन आज वे मौजूद नहीं हैं। उनके न रहने की खबर आज के अखबार में छपी है।

सुबह-सुबह मैं खिन्न तथा उदास हो जाता हूँ। और बगैर कुछ खाए- पीए ही उनकी अन्तिम यात्रा में शामिल होने के लिए घर से निकल पड़ता हूँ। बहुत सारे परिचित मौजूद हैं। वहाँ सब अलग-अलग समूहों में बैठे उनकी खूबियों की चर्चा में मशगूल हैं।

मैं किसी से बात नहीं करता। गला रुंध गया है। मुँह से एक बोल तक नहीं फूटता। ग़मग़ीन और उदास एक तरफ बैठा हूँ। सबसे अलग।

मेरी आँखों में आँसुओं का सैलाब उमड़ आया है। रह-रहकर उनकी वह बात मेरे दिमाग़ पर हथौड़े की तरह बज रही है। 'सच अर्ज कर रहा हूँ। मैं मर जाऊँगा, लेकिन रिश्वत नहीं दूँगा। ' वे अपनी बात को इतना जल्द सच साबित कर देंगे। मैं इसकी कल्पना भी नहीं कर सकता था।

कांकरोली, जिला, राजसमन्द (राजस्थान)

मो. 9829161342, 9413671342

ईमेल: qamar.mewari@gamail.com

कहानी

अतीत के पन्ने

डॉ. निशा नंदिनी भारतीय

उसका मन बहुत उदास था। आज उम्र के छह दशक पार करने के बाद वह अपने अब तक के पूरे जीवन का लेखा- जोखा तैयार कर रही थी। अतीत की स्मृतियों में डूबी मालती को अब ऐसा लगता था कि जीवन न सुख है और न दुख है बल्कि जीवन एक संघर्ष का नाम है। संघर्ष के बाद मिली सफलता से किसी को सुख की अनुभूति होती है और असफलता से दुख की।

संघर्ष तो उसने भी बहुत किया था पर सुख के कुछ कण ही उसके हिस्से आये थे। दहलीज पर बैठी मालती स्वेटर बुनते- बुनते अपने अतीत के फंदों को उधेड़- बुन रही थी। घर पर कोई न था, उम्र के इस पड़ाव पर सब उसका साथ छोड़कर अपने आप में रम चुके थे।

बेटी मोना का विवाह हो चुका था। बेटा विदेश में अपने परिवार सहित खुश था। पति कुछ दिन के लिए अपने पुश्तैनी घर को देखने गांव गए हुए थे।

मालती उस समय की बी.ए पास थी पर आज उसे लगता था कि वह बिल्कुल अनपढ़ गंवार है क्योंकि उसके बच्चे उसे ऐसा ही समझते थे। बात- बात पर उसे टोकते थे। माँ तुम्हें तो हाई सोसाइटी में उठना बैठना भी नहीं आता है। तुमको तो कहीं साथ ले जाने पर भी सोचना पड़ता है। माँ तुम अपने आप को बदलती क्यों नहीं ? तुम तो अभी तक पुराने संस्कारों की चादर ओढ़े बैठी हो।

माँ, तुम ग्रेजुयट हो पर तुम्हें इंग्लिश का एक वाक्य भी बोलना नहीं आता है। तुम्हारे समय में सबको यूँही पास कर दिया जाता होगा। यह सुनकर उसे बहुत दु:ख होता था। वह सब कुछ सुनती रहती थी पर मुँह से एक शब्द न बोलती थी।

मालती अपने जीवन को खंगाल रही थी।

मालती का बचपन बिहार के एक छोटे-से कस्बे में बीता। मिट्टी के घर, आम के पेड़, और आँगन में खेलते हुए दिन – यही उसकी दुनिया थी। उसके पिता शास्त्रीय संगीत के प्रेमी और माँ गृहिणी थीं, जो पुराने किस्सों और लोकगीतों से घर को जीवंत बनाए रखती थीं।

मालती बचपन से ही जिज्ञासु थी। उसे किताबें पढ़ने का बहुत शौक था। गाँव के छोटे पुस्तकालय से वह हर हफ्ते एक किताब ले आती। वह धर्मवीर भारती, प्रेमचंद और सुभद्राकुमारी चौहान की कहानियों में खो जाती।

मालती के सपने अनकहे थे। वह चाहती थी कि वह भी बड़ी होकर एक लेखिका बने, या शायद अध्यापिका। जब कभी वह स्कूल जाती, उसकी आँखों में अपने शिक्षक की तरह बच्चों को पढ़ाने का सपना झिलमिलाता।

वह अपने स्कूल में अव्वल आती थी। उसके पिता उसके अच्छे परिणामों से खुश तो होते, लेकिन उन्हें यह सब बस एक ज़रूरत भर लगता – जब तक शादी नहीं हो जाती, तब तक पढ़ लो।

मालती की दो खास सहेलियाँ थीं – सीमा और सुरेखा। तीनों हर बात साझा करतीं, स्कूल के काम से लेकर अपने छोटे-छोटे सपनों तक। कभी आम के पेड़ के नीचे बैठ कर कविताएं पढ़तीं, तो कभी गप्पों में शाम बिता देतीं।

सीमा अक्सर कहती, “मालती, तू बहुत दूर जाएगी। तेरे जैसे लोग दुनिया बदलते हैं। ” और मालती मुस्करा कर सिर झुका लेती। पर उस मुस्कान के पीछे एक डर छिपा रहता – क्या सच में उसे कभी उड़ान मिलेगी?

कॉलेज में मालती ने हिंदी साहित्य विषय चुना। उसे नाटक, कविता और आलोचना सब भाते थे। मोहन राकेश का “आषाढ़ का एक दिन” उसने कई बार पढ़ा था।

कॉलेज की लाइब्रेरी उसके लिए मंदिर थी। वह घंटों वहाँ बैठी रहती – चुपचाप, खोई-सी। उसकी अध्यापिकाएँ उससे प्रभावित थीं, वे उसे विश्वविद्यालय स्तर की प्रतियोगिताओं के लिए तैयार करतीं।

बी.ए. के अंतिम वर्ष में मालती ने मास्टर डिग्री करने की इच्छा अपने पिता से प्रकट की। वह चाहती थी कॉलेज में पढ़ाना, लेकिन पिता की चिंता कहीं और थी – “अब बीस की होने को आई हो। विवाह का समय है। ”

मालती कुछ नहीं कह सकी। उसने धीरे से किताब बंद की और अपने सपनों पर चुप्पी की चादर डाल दी। कुछ ही महीनों में उसका रिश्ता तय हो गया और कुछ ही हफ्तों में विवाह भी।

पिता की आँखों में चिंता थी और मालती की आँखों में सपना।
"बेटी अब तेरे विवाह की उम्र हो चली है,"
पिता ने धीरे से कहा।
मालती ने हिम्मत कर कहा,
"बापू, मैं और पढ़ना चाहती हूँ... मास्टर डिग्री..."
पर पिता के माथे पर बल पड़ गए।
"समाज क्या कहेगा? तेरे पीछे दो बहनें और हैं।"
सपने एक क्षण में चटक गए।
कुछ दिन में रिश्ता आया—
केशव जोशी, व्यवसायी, सुलझा हुआ परिवार।
मालती की चुप्पी को 'हाँ' समझ लिया गया।

मालती अब किसी की बेटी नहीं, किसी की बहू थी।
नई दुनिया, नए चेहरे, नई उम्मीदें।
सास-ससुर, ननद, देवर, पति—
हर कोई अपने अधिकारों के साथ सामने था,
पर उसके अधिकार कहीं खो गए थे।
मालती सुबह से रात तक चक्की की तरह घूमती रही।
पर उसने कभी शिकायत नहीं की।
शादी के दो साल में दो बच्चों की माँ बन गई।
मालती का नाम अब "माँ" हो गया था।

बच्चों की किलकारी उसकी जिंदगी की सबसे बड़ी खुशी बन गई।
रात को बच्चों को गोद में लेकर मालती भूल जाती थी कि
उसका कोई सपना था, कोई पढ़ाई अधूरी थी।
सिर्फ एक कसक रह जाती—
क्या मैं खुद के लिए कभी कुछ कर पाऊँगी?
हर साल बच्चों की फीस, किताबें, यूनिफॉर्म...
मालती हर खर्च से पहले अपने सपनों को काटती।
पर हर कट के बाद भी वह मुस्कुराती रही।
वह घर उसका था, पर उसमें उसकी कोई जगह नहीं थी।
पति देर रात आते, थक कर चुपचाप खाना खा लेते।
कोई संवाद नहीं, कोई साझेदारी नहीं।
केशव अपने व्यापार में व्यस्त थे।
मालती की बातें सुनने का वक्त उनके पास नहीं था।

कभी-कभी मन होता—बैठकर बातें करें, हँसें...
पर दीवारें गूँगी थीं, और खिड़कियाँ बंद।
सास हर सुबह कहती,
"बहू, पहले घर का,फिर अपने मन का।"
मालती ने सीख लिया था—
संस्कार निभाने हैं, चाहें आत्मा रूठे।
त्योहार आते, वो पूरे तन-मन से घर सजाती,
पर कोई यह न पूछता कि उसके मन का क्या हाल है।
एक दिन माँ की चिट्ठी आई—
"बिटिया, कैसी है तू?"
और मालती घंटों उस चिट्ठी को पढ़ती रही,
जैसे उसमें उसका खोया अस्तित्व लिखा हो।

विवाह के वर्षों बाद भी
मालती और केशव के बीच की दूरी कभी नहीं पटी।
शुरुआत में मालती ने सोचा था—
शायद वक्त के साथ प्रेम भी पनपेगा,
पर वक्त बीतता गया, प्रेम नहीं आया।
केशव एक भले आदमी थे, पर भावनाओं से रहित।
घर का खर्च, बच्चों की पढ़ाई, त्योहारों पर उपहार, सब था।
बस, साझेदारी नहीं थी।

जब भी मालती कुछ कहना चाहती,
केशव किसी अख़बार या खाते की किताब में खोए रहते।
"तुम ठीक हो न?" पूछने वाला कोई नहीं था।
एक बार उसने कहा,
"आपसे बात करने का मन होता है..."
तो उत्तर मिला—
"अब इन सब बातों का वक्त नहीं रहा।"
मालती ने धीरे-धीरे अपने भीतर आवाज़ करना बंद कर दिया।

एक दिन जब केशव शहर से बाहर गए,
मालती देर रात तक स्वेटर बुनती रही।
उसने रेडियो चालू किया—
पुरानी ग़ज़लें बज रही थीं।

हर लफ़्ज़ जैसे उसके मन की गिरहें खोल रहा था।

"कोई फ़रियाद तेरे दिल में दबी हो जैसे..."
उसकी आँखें भीग गईं।

कितने वर्षों बाद उसने खुद से बात की—
"क्या मैं अब भी वही मालती हूँ जो कभी किताबों में डूबी रहती थी?"
"क्या अब भी मैं कुछ कर सकती हूँ?"
"क्या अब भी कोई सपना सहेज सकती हूँ?"

वह खुद से सवाल पूछती रही,
और पहली बार खुद से जवाब भी मिला—

"हाँ, तू अब भी वही मालती है। और अब भी कर सकती है।"
उस रात मालती की आँखें देर तक खुली रहीं,
पर पहली बार वह थकी नहीं थी,
बल्कि भीतर से जाग रही थी।

मालती ने एक कॉपी निकाली—पुरानी, जिसके पन्ने पीले पड़ चुके थे।
उसने सोचा—
"काश मैं कभी अपने पिता को एक पत्र लिख पाती..."
मन में कई बातें थीं, जो कभी कह नहीं पाई।

"बापू,
आपने मेरी पढ़ाई अधूरी क्यों छोड़ दी?
क्या एक लड़की के सपने इतने तुच्छ होते हैं?
क्या मेरे भीतर की आग को बुझाना ही आपका कर्तव्य था?"
फिर खुद ही कलम रोक दी।
"नहीं, बापू बुरे नहीं थे।
बस, समय ऐसा था...
जिसमें बेटी का सपना कोई मायने नहीं रखता था।"

मालती की आँखें भीग गईं,
पर इस बार आँसू शिकायत के नहीं,
मुक्ति के थे।

एक दिन अलमारी की सफाई करते हुए,
उसे अपनी पुरानी किताबें मिल गईं—
"गुनाहों का देवता", "राग दरबारी", "आषाढ़ का एक दिन"।

उसने धीरे-धीरे पन्ने पलटने शुरू किए।
हर पंक्ति जैसे उसके भीतर कुछ जगा रही थी।
उसने किताब को सीने से लगा लिया।

उसने सोचा,
"मैं क्यों भूल गई कि किताबें मेरी सबसे सच्ची सखियाँ हैं?"
अब मालती रोज़ थोड़ा पढ़ने लगी—
लिखने की इच्छा भी जागी।

उसकी एक मात्र सहेली आशा ने
उसके लिए कुछ बच्चों को भेजा।
पहले दिन मालती संकोच में थी—
"क्या मैं अब भी कुछ सिखा सकती हूँ?"
लेकिन बच्चों की मुस्कुराहटों ने उसका आत्मविश्वास लौटा दिया।
एक ने पूछा,
"मालती आंटी, आप बहुत सुंदर रंग भरती हैं।
क्या आपने ये सीखा है?"
उसका मन खिल गया।

धीरे-धीरे बच्चों की संख्या बढ़ी।
दीवार पर बच्चों की बनाई पेंटिंग्स सजने लगीं।
एक कोने में लगी रंग-ब्रश की टोकरी
अब उसके जीवन की नयी थाली थी,
जिसमें आत्मसम्मान परोसा जाता था।

बेटी मोना कभी-कभी फोन कर लेती थी,
पर आजकल वह भी बातचीत में थोड़ी नरम हो गई थी।
"माँ, आपने बच्चों को आर्ट सिखाना शुरू किया? वाह, गुड!"
यह "गुड" सुनते ही मालती की आत्मा मुस्करा गई।

बेटे ने एक दिन वीडियो कॉल पर कहा,
"माँ, आपने जो सिखाया था बचपन में...
आज भी मेरी बेटी उसी ऊन से बनी टोपी पहनती है।"

यह सुनकर मालती को पहली बार लगा,
कि वह केवल एक माँ नहीं—
एक कलाकार, एक मार्गदर्शक और एक संपूर्ण स्त्री भी है।

मालती का छोटा-सा घर अब रंगों से भर गया था।
दीवारों पर बच्चों की पेंटिंग्स, टेबल पर ब्रश और रंगों की महक,
और सबसे बढ़कर… उसके चेहरे पर एक शांति।

अब जब कोई कहता,
"तुम क्या कर लोगी इस उम्र में?"
तो वह मुस्कराकर कहती,
"उम्र नहीं, इच्छा ज़रूरी होती है।"

अब वह 'माँ' और 'पत्नी' के साथ 'शिक्षिका', 'गाइड', और 'प्रेरणा' बन चुकी थी।

एक शाम जब पति केशव लौटे,
तो उन्होंने बरामदे में बच्चों की चहचहाहट देखी।

"इतने बच्चे कहाँ से?"
"ये मेरे आर्ट क्लास के बच्चे हैं।"
मालती ने सरलता से कहा।

"तुमने तो कमाल कर दिया मालती..."
उनकी आँखों में गर्व था।
शायद पहली बार उन्होंने उसे केवल 'पत्नी' नहीं,
एक 'व्यक्ति' के रूप में देखा।

मोना छुट्टियों में आई और
माँ के बनाए रंगों से सजा बाल-कक्ष देखकर हैरान रह गई।
"माँ, तुमने जो किया है, उससे हमें भी सीखना चाहिए।"

उसने माँ के हाथों से बने स्वेटर को पहली बार अपने बैग में रखा,
"अब मैं इसे पहनूँगी, और अपनी बेटी को भी दूँगी।"
बेटा वीडियो कॉल पर बच्चों को दिखाता,
"ये मेरी माँ हैं, हमारी आर्ट टीचर!"

मालती मुस्कराती—
उसे अपने अस्तित्व की गूँज सुनाई दे रही थी।

वसंत का पहला दिन था।
मालती अपने आँगन में खड़ी, गुनगुनी धूप में आंखें मूँद कर खड़ी थी।

उसकी उँगलियाँ अब भी ऊन के फंदे बुन रही थीं—
पर इस बार वह स्वेटर नहीं,

अपना भविष्य बुन रही थी।

उसने अपनी डायरी में लिखा—

"मैंने अतीत के पन्ने पलटे थे,
अब जीवन की किताब नए सिरे से लिख रही हूँ।
मैं अधूरी नहीं हूँ।
मैं सम्पूर्ण हूँ— स्वयं में।"

"अतीत के पन्ने" केवल एक स्त्री की कथा नहीं,
बल्कि हर उस आत्मा की कहानी है,
जो कभी चुप रही, सहती रही,
पर अंततः अपनी आवाज़ खोज ही ली।

यह मालती की नहीं,
हर नारी की यात्रा है—
जहाँ अतीत से उगती है एक नई सुबह।

तिनसुकिया, असम, मो. 9435533394

कहानी

वन्याग्नि

वीणा विज 'उदित'

"यह हुई ना बात! यह कच्चे- पक्के नींबू वाले हरे रंग का लहंगा तुझ पर बहुत फब रहा है!"कहते हुए इला ने नव्या के शरीर से सटा लहंगा- चोली नीचे उतार दिया। सुबह से दिल्ली के चांदनी चौक में लहंगे की मार्केट की इतनी बारीकी से खोजबीन की जा रही थी कि अब सांझ ढले सब की बस्स बोल गई थी। कुछ पसंद ही नहीं आ रहा था! नव्या भी लहंगे पहन- पहन कर ट्राई कर- करके थक चुकी थी! माँ तो इस दुकान पर अधलेटी सी पड़ी थी आराम कुर्सी पर। "नव कीर्ति"शादी के लहंगे की लाजवाब वैरायटी की दुकान थी! आखिर माँ का बटुआ ढीला हुआ और बड़े-बड़े तीन डिब्बे पकड़े गली के बाहर निकल कर एक ऑटो रुकाकर तीनों राजौरी गार्डन के लिए चल पड़ीं।

नव्या और इला दोनों सहेलियों ने कंप्यूटर इंजीनियरिंग इकट्ठी करी थी। नव्या के बाबूजी को एक अच्छा रिश्ता अमेरिका का मिल गया तो अपनी बेटी के भाग्य को सराहते हुए उन्होंने उसकी रजामंदी से बात पक्की कर दी थी। असल में नव्या और विराट ने आपस में वीडियो कॉल, ईमेल यहां तक कि घंटों चैट भी करी। और जब लगा कि मानसिक स्तर मिलता है, तभी हामी भरी। वह दोनों आभासी पटल पर इश्क कर रहे थे। अब दो हफ्ते बाद उदयपुर में" डेस्टिनेशन वेडिंग" थी।

भावी जीवन के मधुर स्वप्न संजोए हुए विराट और नव्या शादी के पश्चात एक -एक हफ्ता अपने परिवारों में दिल्ली और इंदौर रहकर, बादलों की पालकी पर सवार होकर अमेरिका में अपने नीड़ में आ गए थे। विराट के पास दो बेडरूम का घर था जिसमें नव्या का रैन बसेरा होना था।

विराट के परम मित्र शलभ और उसकी पत्नी ईरा ने द्वारचार करके नव्या का गृह- पदार्पण करवाया ! नव्या को उनकी यह अदा खूब भाई थी। नव्या ने आते ही ईरा से बहुत कुछ सीखने का यत्न किया। विराट ने उसे दाहिने हाथ की ड्राइविंग सिखाई और दो महीने बाद ही उसने ड्राइविंग की परीक्षा में उत्तीर्ण होकर लाइसेंस ले लिया। साथ ही साथ में वह घर के लिए खरीदारी भी खूब कर रही थी और पैसे खर्चने की आत्म संतुष्टि का भाव उसमें उत्साह वर्धन किए रहता था। जीवन में आती नीरसता और एकरसता को तोड़ने के लिए शॉपिंग करना बहुत सफल उपाय होता है, लेकिन यहां तो ऐसा मौका आया ही नहीं, वह मस्त थी।

साथ ही साथ नव्या ने नौकरी के लिए आवेदन भी भेज दिए थे कई जगह। कोई जल्दी तो थी नहीं। वह गृहस्थी बसाने में बहुत मस्त हो गई थी। विराट को भी जीवन का आनंद आ रहा था। पांच-छै महीने बाद दो-तीन जगह साक्षात्कार देने के बाद उसकी नौकरी लग गई थी। अब वह दुगने उत्साह से भर उठी थी। जीने का ढंग बदलने लगा था।

नव्या बहुत मेहनत कर रही थी विदेश में गोरों की संगत में। काम का बोझ भी बहुत था तो कई बार पतिदेव को पत्नी सुख से भी वंचित रह जाना पड़ता था, जिससे वह बहुत खिन्न हो जाता था। शादी की दूसरी सालगिरह आते तक पता ही नहीं चला नव्या कब गर्भवती हो गई थी। उसे डबल बधाई मिल रही थी मित्रों से एवं परिवार से। उनके घर नन्ही वान्या आ गई थी। तीसरी सालगिरह पर उन्होंने नया घर ले लिया था।

वान्या चलने लग गई थी तो मम्मी पापा के पास आकर लाड लड़ाती थी, जिससे खुशी का माहौल बन जाता था। डे केयर में भी वह मम्मी का बेसब्री से इंतजार करती थी। विराट भी उससे खेलने के लिए घर आने की जल्दी करता था। सब कुछ ठीक चलने लग गया था कि तभी पता चला... नव्या के पांव पुन: भारी हैं!

नव्या की डिलीवरी पेट चाक करके हुई। बेटा हुआ। विराट को भी कुछ दिनों के लिए छुट्टी लेनी पड़ी। इस तरह की परेशानियों से घिरे विराट को हर दिन चिड़चिड़ाहट होने लगी थी। वह हर बात पर नव्या पर गुस्सा निकालता। नव्या से अपनी सेहत का तो क्या बच्चों का ध्यान भी नहीं रखा जा रहा था। ऊपर से विराट का क्रोध सहना। उसकी भी बस्स बोल गई थी।

वान्या नन्हे भाई को देखकर खूब प्रसन्न होती थी और उसे काका कहती थी। उसके साथ ही छोटे काके' विराज' को भी डे केयर सेंटर में डाल दिया गया। वहाँ अपने चेंबर में वान्या काका-काका कहकर रोती थी। जब उसे काका के चैम्बर में ले जाते तो चुप कर जाती थी। वह वहाँ से हटने को तैयार नहीं होती थी जिससे सब बच्चे डिस्टर्ब होते थे। अपने चेंबर में आकर वह रोती

थी, जिससे सब बच्चे रोने लग जाते थे। वहाँ की मैडम लोग बहुत तंग आ गई थीं उससे। उन्होंने नव्या को कह दिया कि वह उनके बच्चों को नहीं रखेंगी। उनका कुछ और इंतजाम कर लें। नव्या नई परेशानी से घिर गई थी। ऑफिस से छुट्टी नहीं मिल रही थी। अब वह बिना पे के छुट्टी ले रही थी। उसने विराट से कहा तो उसने साफ मना कर दिया। विराट चाहता था कि नव्या सिर्फ उसकी ओर ध्यान दे। पहले नव्या की नौकरी उसे बोझ लगती थी अब बच्चे उसे बोझ लगने लग गए थे। इस मामले में वह बहुत सनकी था। वह उल्टा उसी को डांटने लगा,

"मेरा ख्याल है तुम नौकरी छोड़ दो या तीन-चार वर्ष का गैप डालकर फिर से नौकरी कर लेना आखिर बच्चे तो पालने हैं और अगर नौकरी ना छोड़ सको तो इन दोनों को भारत अपने मां -बाबूजी के पास भेज दो। वह पाल कर बड़ा कर देंगे तो हम इन्हें वापस ले आएंगे। "

विराट के मित्र शलभ और ईरा ने भी विराट को खूब समझाया लेकिन मदद नहीं कर पा रहे थे क्योंकि वे दोनों भी जॉब करते थे। उन्होंने अभी तक बच्चा नहीं किया था। वह कहते थे कि वे अभी अफोर्ड नहीं कर सकते। उनके पास समय ही नहीं था। पैसे की कमी नहीं थी। हां, समय की कमी थी। जैसी परिस्थितियाँ होती हैं, इंसान वैसे ही विचारों के आदी हो जाते हैं।

विराट को एक सनक सवार हो गई थी। वह गूगल पर अमेरिका में फोस्टर होम के नियमों का आंकलन करने हेतु सर्च करने लग गया था। उसे पक्का विश्वास था कि नव्या को नौकरी का नशा चढ़ चुका है वह नौकरी तो नहीं छोड़ेगी। हां, अलबत्ता बच्चों को अपने मां-बाप के पास भारत भेज देगी। यदि बच्चे अपने से दूर करने ही हैं तो क्यों ना उनके पालन करने वाले माता-पिता ढूंढ लिए जाएँ। इससे यह अमेरिका में ही पलेंगे और बड़े होने पर हमें यहीं वापस मिल जाएँगे। काले लोग तो अपने बच्चे वहाँ फौस्टर होम में पालते ही रहते हैं। उसे यही फितूर चढ़ गया था।

पारिवारिक संबंधों में यदि प्रेम, संजीदगी, आदर- सम्मान का भाव ना रहे, तो दो बातें ही होती हैं या तो घुटन भरी ज़िंदगी या परिवार में टूटन। विडंबना तो यह है कि इस टूटन की काल कोठरी की घुटन स्त्री को ही सहनी पड़ती है। इन कुंठाओं से इतर कहाँ है उसका गुज़ारा ? गृहस्थी में तूफान आए या चक्रवात की ऊँची लहरों के थपेडों की बौछार -उनका टकराव नारी के आँचल को ही भिगोता है उसे अपनी चपेट में ले लेता है।

विराट चुपचाप फोस्टर होम (बच्चे पालने वाले घर) वालों से पूरी पूछताछ करके दो दिन की छुट्टी लेकर घर बैठ गया। घर में बच्चों के समान की लिस्ट बनाकर उसने पैकिंग भी कर ली और दूसरे दिन उन्हें फोस्टर होम ले गया। एक अंग्रेज दंपति जिन्होंने फोस्टर पेरेंट्स का लाइसेंस लिया हुआ था, उन्हें ही अपने दोनों बच्चे दे आया और वहाँ की फीस भी भर आया। बाकी, उसने हर तरह से मालूम कर लिया था कि उनको फेडरल गवर्नमेंट भी पैसे देती है।

सांझ ढले जब नव्या ऑफिस से घर आई, तो उसे घर एकदम सूना लगा। उसे बच्चे कहीं दिखाई नहीं दिए तो उसने विराट को आवाज दी स्टडी में,

"बच्चे कहाँ है विराट? दोनों कहाँ गए हैं? विराट...! सुनाई नहीं दे रहा क्या? बच्चे कहाँ हैं?"उसने पास जाकर पूछा।

विराट ने अपने आप को जवाब देने के लिए तैयार किया हुआ था। वह खींझ कर बोला,

"बड़ी मुश्किल से उस शोर से छुटकारा मिला है तो तुम मेरा सिर खा रही हो। कौन सा तूफान आ गया है? शुक्र है दो घड़ी चैन मिला है घर में! क्या करना है तुमने बच्चों को? आराम से बैठो!"

"ये क्या बहकी- बहकी बातें कर रहे हो? मैं बच्चों का पूछ रही हूं! कहाँ है बच्चे?"

"बच्चों को जहां होना चाहिए, वहाँ पहुँचा आया हूं। अब तुम भी चैन से रहो। जब बड़े होंगे तो मिल जाएँगे। तुमसे तो बच्चे पाले नहीं जा रहे थे। सो उनका इंतज़ाम कर दिया है। "

"बड़े होंगे तो मिल जाएँगे! यह क्या कह रहे हो? तुम होश में तो हो? " नव्या चीख कर बोली। वह थर -थर काँप रही थी। विराट का कंधा पकड़ कर उसने जोर से हिलाया।

"बताओ बच्चे कहाँ है?"

"नहीं बताऊँगा क्या कर लोगी?"

"तुम्हारा मुँह नोच लूँगी। एक तड़पती हुई माँ अपने बच्चों के लिए शेरनी जैसी हो जाती है। जल्दी बताओ बच्चे कहाँ है मेरा सब्र खत्म हो रहा है। "

उसका रौद्र रूप देखकर विराट डर गया और बोला, "चलो बैठो कार में, उन्हें फौस्टर होम में रख दिया है!"इतना सुनते ही नव्या घबराई हुई चीख़ कर बोली, "क्या? "

और वह उसको मारने दौड़ी।

" चलो, बाबा, उनके पास लेकर चलता हूँ। "

समय काटे नहीं कट रहा था। वहाँ पहुँचने में दो घंटे लग गए। रास्ते में वह सब बातें दोहरा रहा था कि तुम्हें कहा था नौकरी छोड़ दो वगैरा-वगैरा। नव्या इतना ही बोली, "मैंने सोचा था तुम छुट्टी लेकर मेरी मदद कर रहे हो बच्चों को संभालने में। मैं दूसरे डे केयर का पता कर रही थी। तुम तो धोखेबाज़ निकले। "इसके

अलावा वह कुछ भी नहीं सुन रही थी। उसे बच्चों के रोने की आवाज़ें आ रही थीं।

सच में जब यह लोग वहाँ पहुँचे, तो दोनों बच्चे खूब रो रहे थे। वह पालक दंपति ढेर सारे खिलौने देकर उनको चुप कराने का यत्न कर रहे थे। माँ को देखते ही वान्या"मम्मी "कह कर ज़ोर से चिल्लाई और आकर माँ से लिपट गई। नव्या उसको गोद में उठाए उसका सारा चेहरा चूमे जा रही थी। रोते हुए विराज को भी उसने दूसरे हाथ से उठा लिया था। उसने उस दंपति से बात भी नहीं करी। बच्चों को उठाए वह कार में जाकर बैठ गई थी।

उसके दिमाग में फौस्टर होम की न्यूज़ घूम रही थीं। वह पढ़ा करती थी कि अफ्रीकन अमेरिकन को बच्चे पालने नहीं आते हैं इसलिए उन्हें फेडरल गवर्नमेंट द्वारा चलाए जा रहे "पालक माता-पिता" के हाथ सौंप दिया जाता है ! जहां वे चिंता और डिप्रेशन के शिकार हो जाते हैं या उन्हें मानसिक रोग लग जाते हैं क्योंकि बच्चों को वहाँ अपने असली माता-पिता नहीं मिलते हैं। जिनकी संख्या हजारों में थी। उनके नियमों के अनुसार बच्चे अठारह साल के होने पर ही माता-पिता को मिलते थे।

जो भी था, इसके भयावह परिणाम होते थे।

दोनों बच्चों को छाती से चिपकाए वह जब घर में दाखिल हुई तो उसने ढेर सारे फैंसले मन ही मन में ले लिए थे। सबसे पहले उसने लम्बी छुट्टी के लिए आवेदन पत्र भेज दिया। उसी रात को बाबूजी से कहा कि माँ को भेज दें। वह उनका टिकट भेज रही है। साथ ही वह ज़ार-ज़ार रोए जा रही थी। ऑफिस की अपनी दो सहेलियों को उसने सारी घटना बताई, जिसे सुनकर उन्होंने आना चाहा– पर उसने मना कर दिया। हाँ, फोन पर ही सलाह-मशवरा किया।

एक माँ की अंतरात्मा तड़प रही थी। वह भीतर के ज़ख्मों से रिसते खून को आंखों के रास्ते आंसुओं का दरिया बहा रही थी। उसकी साँस धौंकनी सी चल रही थी और हाथ पैर काँपे जा रहे थे। वह हैरान थी इस बाप की हिम्मत देखकर जो अठारह वर्षों तक यानी कि बालिग़ होने तक अपने को संतान सुख से वंचित कर संतुष्ट था। पितृ सुख से उसका कोई लेना- देना नहीं था! कितना पाषाण हृदय था उसका!

नव्या का मन हो रहा था उसके मुंह पर थूक दे। उधर वह व्हिस्की के दो- चार पैग चढ़ा कर जाके सो गया था। जबकि इसने सारी रात बच्चों को गोद में लिटाए सोफे के साथ कार्पेट पर बैठकर काट दी थी।

अगले दस दिन तक वह पल भर को भी बच्चों से अलग नहीं होती थी, जब तक कि उसकी माँ नहीं आ गई थीं।

उसने पुनः ऑफिस जाना आरंभ कर दिया था अब। अपने मैनेजर एवं कुछ सहयोगियों से सलाह करके उसने तलाक की अर्जी कोर्ट में दे दी थी। तलाक के लिए कारण स्पष्ट था," अपनी और बच्चों की सुरक्षा!"

ना मालूम छुट्टियाँ लेकर वह सरकारी लोगों को बुलाकर अपने बच्चे दिखाता रहता था कि उनको देखने वाला कोई नहीं है। क्योंकि बिना प्रूफ के बच्चों को पालक माता-पिता की देखरेख में रखने की आज्ञा नहीं मिलती है। वह बहुत डर गई थी। उसके दोस्त व सहेलियाँ सभी हैरान थे विराट के इस कदम पर। उसने विराट से भी कह दिया,

" अब हम एक ही छत के नीचे नहीं रह सकते हैं! अच्छा यही है कि तुम अपना इंतज़ाम कहीं और कर लो। "

विराट ने बिना विरोध के एक फ्लैट किराए पर ले लिया। वह वहीं जाकर रहने लग गया था। नव्या की मां भी अब वापस भारत चली गई थीं।

वान्या अब स्कूल जाने लग गई थी। विराज भी डे केयर में मस्त रहता था। नव्या फिर भी डरती थी कि विराट कहीं बच्चों को ले ना जाए। तलाक होने में एक साल लग गया। नव्या ने पैसे की कोई मांग नहीं करी। जज ने फ़ैंसला दिया कि बच्चे एक हफ्ता माँ के पास रहेंगे तो एक हफ्ता पापा के पास रहेंगे। यह विराट की माँग थी।

जज ने और मुसीबत डाल दी। बच्चे पापा के पास खुश नहीं रहते थे लेकिन कानून का कहना तो मानना पड़ना था। एक बार वान्या को वायरल बुखार हो गया और बच्चों का पापा के घर जाने का समय आ गया। नव्या उसे अपने से दूर नहीं करना चाह रही थी क्योंकि वह उसे गोद में लेकर रात भर बैठी रही थी। माँ की पीड़ा को गहरी व्यंजना के साथ नव्या बाखूबी से महसूस कर रही थी। लेकिन कानून ने उसके हाथ बांध दिए थे। उसने विराट से इल्तज़ा करी,

" इसे ठीक हो जाने दो! तुम बीमार बच्ची को कैसे संभालोगे? स्कूल भी नहीं भेज सकते और तुम छुट्टी भी नहीं लोगे--- मैं जानती हूँ। "

लेकिन विराट नहीं माना। उसे ज़िद आ गई थी। वह दोनों बच्चे ले गया अपने घर। वान्या का रो-रो कर बुरा हाल था। वह मम्मी के लिए बिलख रही थी। बच्चों के जाते ही नव्या पत्थर की तरह जड़वत वहीं की वहीं बैठी रह गई थी।

जब कुछ होश आया तो वह कार लेकर विराट के घर गई और दरवाजे की घंटी बजा-बजाकर जब थक गई और दरवाज़ा नहीं खुला तो उसने दरवाज़ा पीटना आरंभ कर दिया। पड़ोसी बाहर झांकने लग गए थे। लेकिन वह दरवाज़ा नहीं खोल रहा था। भीतर से बच्चों के जोर-जोर से रोने की आवाज़ें आ रही थीं। बेबस, बेहाल, बेसब्र और बच्चों के प्यार में पागल माँ को कुछ सूझ नहीं रहा था। बदहवास सी वह फ्लैट के बाहर चक्कर लगाने लगी कि तभी उसके दिमाग में घर के भीतर घुसने का एक नया विचार कौंधा।

घर के भीतर घुसने के लिए उसने वहाँ फ्लैट में लगे एयर कंडीशनर के पेच खोलने आरंभ कर दिए। घंटा भर लगा और पेच खुल गए। इस बीच विराट ने बाहर झांका तो किसी को न पाकर वह तसल्ली से भीतर चला गया। तभी नव्या से कुछ पेच गिर गए, जिससे बाहर खटका सुनकर विराट ने भीतर की लाइट बंद करके बाहर झांका तो उसे नव्या का यह रवैया बर्दाश्त नहीं हुआ। उसने आव देख ना ताव और झट पुलिस को फोन कर दिया। अमेरिका में किसी के घर यहां तक कि किसी के घर के आसपास की जमीन पर भी कोई बिना आज्ञा के आ जाए तो वह जुर्म है। फिर यह तो भीतर जाकर चोरी करने की तोहमत लगा दी गई थी। नव्या ने इस चोर रास्ते से बच्चों को तो क्या मिलना था उसे हथकड़ियां लगाकर पुलिस पकड़ कर ले गई। उसे सामने देखकर बीमार बेटी और बेटा भी जोर-जोर से रो रहे थे। सब पड़ोसी भी घरों से बाहर निकल आए थे। नव्या के बाल बिखरे थे। आंसुओं से तरबतर चेहरा व रो-रो कर आंखें सूज चुकी थीं। उसके शरीर पर घर पहनने वाले कपड़े टॉप और बॉटम था। अब रही- सही कसर भी पूरी हो गई थी।

क्या सोचा था क्या हो गया था?

रिश्तों की नाज़ुकता को समझने हेतु संजीदा होने का अब समय समाप्त हो गया था!!

पासा पलट गया था। नव्या को बिल्कुल होश नहीं था। उसकी गृहस्थी पहले ही समाप्त हो गई थी। थाने में सीखचों के पीछे बैठी थी। उसे छुड़ाने और बेल देने का मौका था। नव्या को दूर-दूर तक कहीं कोई दिखाई नहीं दे रहा था जो उसकी बेल देने आता। वह जेल में लोहे के सीखचों के पीछे बैठी नाउम्मीदी में मरणासन्न हो चुकी थी।

एकांत में नितांत अकेलेपन को सहेजना कितना दुष्कर हो जाता है! एक घुटन- एक उकताहट बेचारगी में बदल जाती है! एक दर्द जो टीस बन जाए और भीतर ही भीतर पले फिर गल जाए कि उबकाई आ जाए। यूं लगे मानो गले में गुठली अटक गई हो जो ना निगलते बनती है ना थूकते। चारों ओर से आ दबोचता है "विकराल अकेलापन"! या फिर डराती है उसको अपने इर्द-गिर्द घूमती एक अभिशप्त आत्मा-जिसने उसका जीना मुहाल कर दिया था, जिससे वह छुटकारा पाना चाहती है। आंखें फाड़े टकटकी लगाए जेल की कोठरी की दीवारों से टकराकर दृष्टि का लौटना फिर फर्श पर चीटियों की कतार को देखना जो बिन देखे आगे बढ़ती रहतीं फिर दीवार से टकराकर ना जाने किस ओर चली जाती हैं! पुनः वही रिसता हुआ खालीपन- ऐसा की नस-नस में पसर जाए। चहुं और व्याप्त चुप्पी- केवल चुप्पी! और नाउम्मीदी!

कि तभी अंधेरे की गहराई को चीरता एक सितारा अर्श से आज उसके समक्ष खड़ा अपने प्रकाश से उसको सराबोर कर रहा था। जेल की काल कोठरी की हर रात ज़िंदगी उसे हाथ से फिसलती जान पड़ रही थी और वह अपनी मुट्ठियों में अनिश्चितता को बंद कर सोचती थी की कभी सुबह होगी कि नहीं? लेकिन उसको अप्रत्याशित रूप से सामने पा उसकी जिंदगी दौड़ पड़ी थी खुली हथेली से बाहर।

उसकी कंपनी का मैनेजर जो उसे अनवरत संघर्ष करते हुए देख रहा था, ऑफिस में सब सहयोगियों से सलाह करके उसकी आशाओं के विपरीत उसकी बेल देने आ पहुंचा था। इस घटना से नव्या पर जो कुठाराघात हुआ था और वह जिस बहादुरी और दिलेरी से अपनी लड़ाई लड़ रही थी, यह देखकर वह अंग्रेज उसकी आत्मशक्ति पर चकित था और उसका प्रशंसक बन गया था। छै: फुट का वह अंग्रेज रिचर्ड तकरीबन पेंतालिस वर्ष की आयु का स्वयं एक तलाकशुदा व्यक्ति था जो सबका चहेता था। उसे समक्ष देखकर नव्या में जान लौट आई थी और आशाओं के दीप जल उठे थे। रिचर्ड ने आते ही कहा,

" जीने की उमंग लेकर अब तुम बाहर आओ। बाकी हम सब देख लेंगे। "

सारा ऑफिस उसकी मदद करने को जुट गया था। वकील किया गया और संजीदगी के साथ सब उसके केस में जुट गए थे। इस बार दोनों बच्चे जो घर आए माँ के साथ, तो बस वहीं रह गए थे। उधर विराट ने जब नव्या के ऑफिस में एकता का बल देखा तो भीतर ही भीतर वह डर गया। पुरुष प्रधान विसंगतियाँ जो उस पर हावी थीं उनका दम निकलता नज़र आ रहा था उसे। उसकी कुंठाएं उसी को सताने लगीं। एक दिन अचानक वह न जाने कहाँ चला गया। गायब ही हो गया। ना उसके ऑफिस वालों को पता लगा और ना ही भारत में उसके घर वालों को। बार-बार दूसरी पार्टी की उपस्थिति के बगैर कोर्ट केस खारिज कर दिया गया। नव्या ने राहत

की सांस ली और अपनी शक्ति, धैर्य, संयम और सबसे भाईचारा बना कर रखने के अपने गुणों पर उसे आत्म संतुष्टि हुई।

उसने ईश्वर का लाख-लाख धन्यवाद किया कि वह अप्रत्याशित, अनियंत्रित, अनिश्चित और भयंकर वन्याग्नि से जो मीलों फैले जंगलों को स्वाहा कर देती है, वैसे ही उसका जीवन भी स्वाहा करने आई थी उससे बाहर अपनी हिम्मत और अपने संगी-साथियों की बदौलत जीवित बच गई थी।

एक बार फिर जीवन पटरी पर चलने लगा था। बच्चों ने सारी जिंदगी कभी भी पापा का नाम नहीं लिया। जिस तूफान में वह घिर गई थी उसके असर से वह अब मानसिक रूप से भी बाहर निकल चुकी थी।

समय के पंख वर्षों को अपने ऊपर ढोए उड़े जा रहे थे। नव्या ने अपनी शादी की पच्चीसवीं सालगिरह की सारी रात इन खयालों की बीथियों में गुजार कर जब सुबह सोफे से उठना चाहा तो वान्या और विराज दोनों जवान बच्चों ने आकर मां के गले में बाहें डाल दीं और बोले," गुड मॉर्निंग मामा!"

–जालंधर (पंजाब), मो. 96826 39631

कविता

पुत्र के नाम

सुदर्शन प्रियदर्शिनी

मेरी मौत एक दिन
कागज़ का टुकड़ा बन कर
तुम तक पहुँचेगी।

तुम शून्य में ताक कर
एक बारगी
बस रंगहीन होंगे
और पल भर में
धीरे धीरे कागज़ का टुकड़ा मरोड़ कर
रद्दी की टोकरी में फेंक दोगे...।

फिर अपनी चेतना को...
सांकल लगा कर
दिनचर्या में
लग कर भूल जाओगे सांय तक
कि दफ्तर की टोकरी में
तुम्हारी माँ के मरने की
तुड़ी - मुड़ी खबर पड़ी है...।

शाम को घर जाते जाते
एक सिगरेट सुलगा कर
कार में बैठोगे
खिड़की का शीशा उतार कर धुंआ उगल डालोगे...
और कहोगे अपने आप से
इतना आप से
इतना भी क्या है
एक व्यक्ति के मरने का दुख
जब कि रोज अखबार के पन्नों में कितनी ही लाशें
लिपट कर आती हैं।
और हम बिन देखे
बिन महसूस किए
मौसम की खबर पड़ते हैं
लॉटरी के नंबर देखते हैं...
थियेटर में बदलने वाले
चित्रों पर हमारी दृष्टि जाती है....
ऐसे में
एक माँ के न रहने से
धरती... खाली न हो जायेगी...

साभार

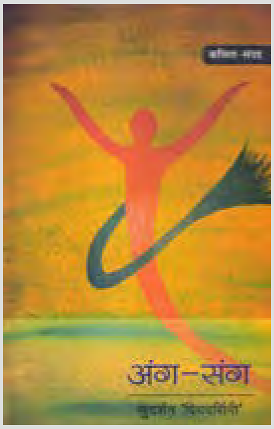

OHIO 44147 U.S.A. फोन न. (440) 717 1699

कहानी

मुआवजा

श्रीभगवान दीक्षित

सन 1894 ईस्वी का भूमि अधिग्रहण का कानून अंग्रेज़ों ने बनाया था। बाद में इसमें समय-समय पर संशोधन भी हुए। कुल मिलाकर ये कहना होगा कि विकास के नाम पर किसानों की ज़मीन औने पौने दामों में खरीदकर उद्योगपतियों, बिल्डरों को दे दी जाये और किसान रह जाएँ ठन-ठन गोपाल। किसी भी किसान नेता ने ये नहीं कहा कि ये कानून ग़लत है। विकास के लिए सड़कें आदि बनवाने के लिए भूमि का अधिग्रहण तो ठीक है। लेकिन विकास के नाम पर उपजाऊ ज़मीन का अधिग्रहण तो उल्टा विनाश का कारण बनता है। जो ज़मीन सोना उगल रही है, उसका अधिग्रहण भी कर लिया जाता है। जबकि देश में बंजर ज़मीन की कमी नही है। जिसमें कारखाने खोले जा सकते हैं और विकास किया जा सकता है। सरकार केवल थोड़ा बहुत मुआवज़ा देकर पल्ला झाड़ लेती हैं लेकिन इससे समाज का कितना विकास या विनाश हुआ है इसका आकलन नही करती।

मुआवज़ा लेकर आपस में लड़ाई झगड़ा और पैसे के बटवारे को लेकर परिवार में ही मारपीट हत्या तक कर देना आम बात है। सरकार ने मुआवज़े का पैसा तो दे दिया लेकिन किसान को उसकी कितनी भारी कीमत चुकानी पड़ती है, इसका अंदाज़ा सरकार को नहीं है। अचानक आए धन से पैदा हुई परिस्थितियों से उसका दिन रात का सुख-चैन छिन जाता है। परिवार टूट जाता है, उसके परिवार में अचानक आए धन से पैदा हुई गंदी आदतों के फैलने के कारण दो चार साल में ही वह रुपया ठिकाने लग जाता है। उसके लड़के समाज में गुंडागर्दी करने लगते हैं। फिर थाना कचहरी और वक़ील आदि में रहा-सहा रुपया भी स्वाहा हो जाता है।

उनके पास कोई योजना भी नहीं। जबकि उनके बुजुर्गों ने पूरी ज़िंदगी खेती करने में संघर्ष किया और आराम से सुख चैन का टुकड़ा खाया है। लेकिन उन किसानों की अगली पीढ़ी के घर में अचानक आयी पैसे की बाढ़ में रिश्ते नाते प्रेम संस्कार सब बह गए। रह गया तो सिर्फ पैसा। और बाद में वह भी शराब और तरह-तरह के ऐब की भेंट चढ़ गया। फिर मकान किराये पर देकर अपना खर्च चलाने लगे। जिनके जितने ज़्यादा कमरे उसकी उतनी ही ज्यादा इन्कम। इस तरह से उनकी तीसरी पीढ़ी को बैठकर खाने की आदत पड़ गयी। साथ में शराब के भी दौर चलने लगे। पूरे गौतमबुद्ध नगर जिले सहित सम्पूर्ण एनसीआर में आज के ये ही हालात है।

बागपत जिले का अहेरा हाल्ट उत्तरी रेलवे का एक छोटा सा स्टेशन है। यहाँ से कई गांवों के लोग दैनिक यात्री के रूप में दिल्ली जाने के लिए ट्रेन पकड़ते हैं। यहाँ के प्लेटफार्म पर कुछ गाँव के दैनिक यात्री आपस में बहस कर रहे थे। सब इधर उधर की घटनाएँ सुना रहे थे। ये उनका रोज़ का काम है, एक घंटा पहले प्लेटफार्म पर सारे इलाके के समाचारों का विश्लेषण करना। आजकल ज़मीन के मुआवज़े को लेकर यहाँ पर बहस छिड़ी हुई है। ये उनका रोज़ का काम है। जो इनमें शामिल नहीं होता उसे ये लोग अपनी बिरादरी से बाहर का मानते हैं। वैसे इनमें अधिकतर दिल्ली में चतुर्थ श्रेणी के कर्मचारी हैं। योगेश ने धान्दू को आते देखकर कहा "आ भाई धांदू कोई नई खबर लाया है क्या?"

"अरे तुम्हें पता नहीं है क्या ? सदरपुर में एक बुड्ढे की परसों रात में हत्या कर दी सिर में हथौड़ा मार के। " धान्दु ने कहा।

सब के सब धान्दू को घेरकर खड़े हो गए। सब आश्चर्य में थे।

"लेकिन यार सुना है एक महीने पहले ही वहाँ मुआवज़ा बांटा गया है। सबके पास बहुत पैसा हो गया। " सोनू ने अपनी पेंट की बेल्ट कसते हुए कहा।

"सारा खेल तो मुआवज़े ने ही बिगाड़ा है। हुआ यूँ था कि सारा पैसा बुड्ढे के कब्जे में था। बुड्ढा बड़े लड़के पर मेहरबान था। उसी को पैसा दिया करता था। बड़े लड़के की लुगाई ने बुड्ढा फांस लिया। अब बुढ़ापे में जवानी के जलवे देखने को मिल जायें तो बुढ़ापा सफल हो जाये। " धान्दू ने कहा।

"हाँ भाई तू भी ठीक कह रहा है। पर एक बात बता उस बुड्ढे के बुढ़ापे को सफल से विफल किसने कर दिया। " देवेंद्र ने अपनी जांघ खुजाते हुए कहा।

"विफल कौण करेगा जिसे अपना हक अपने सामने से जाता हुआ दिखाई देगा वो ही तो बुढ़ापे की जवानी को विफल करेगा" धान्दू ने कहा।

"साफ-साफ बता धान्दू तू भी तो बातों को मुंह में ही घोल रहा है। " सोनू ने कहा।

"उसके छोटे लड़के ने ही ऊपर भेज दिया उसे " धान्दु ने कहा।

और धान्दू ने पूरी कहानी सुनानी शुरू कर दी.

"कल मेरा फूफा आया हुआ था वह सदरपुर का है। फूफा कह रहा था कि बुड्‌ढा घेर में बैलों के पास खुरेडी खाट पर चादर ओढ़ के सोया हुआ था। तुम्हें तो पता ही है गर्मी के दिनों में सण के बाणों की बुनी हुई खुरेडी खाट पर नींद बहुत बढ़िया आया करती हैं। उसके छोटे लड़के ने मौका देखके सोते हुए के सिर पे हथौड़ा मार दिया। बुड्‌ढा चीखने भी न पाया। सीधा पहुँच गया यमराज के पास। फिर उस लड़के ने ही सबेरे सबेरे रोवा-पिट्टी मचा दी कि हाय बापू तू कहाँ चला गया!" धान्दू ने कहा।

"अच्छा फिर के हुया?" सोनू ने कहा।

" होणा के था, पुलिस को तो एक घंटे के अंदर ही पता चल गया था। वे दोनों भाईयों को पकड़ के थाने ले गए और दोनों भाईयों में समझौता करा दिया और दारोगा ने दो लाख रुपयों में सब हिसाब बराबर कर दिया रिपोर्ट तक भी दर्ज नहीं हुई। एक ही दिन में अजल मजल कर दिया गया। नाम बावरिया गिरोह के लग गया, तुम्हें पता ही है उधर बावरिया गिरोह का खौफ छाया हुआ है। " धान्दू ने बातों का छोंक लगाया।

"इसी को तो कहते हैं बुढ़ापे में ढिसरना, उसे इतना भी पता नहीं था कि दो लड़के हैं तो बराबर हिस्सा कर दे पर उसकी भी तो बुढ़ापे में जवानी उफाण मार री थी" नेवले ने कहा। (नेवले का नाम तो नानक था। लेकिन वह नेवले की तरह गर्दन घुमाता रहता था। उसका नाम नेवला ही पड़ गया था)

"ये ही काम तो दारोगा जी ने दो लाख लेकर किया है। " देवेंद्र ने कहा।

"अरे ये तो कुछ भी ना! पिछले साल जिला गाजियाबाद के कनावनी गाँव में तो एक लड़के ने मुआवज़े के चक्कर में अपनी माँ और बाप की गर्दन पिट्ठी दराँती से काट दी थी। मारना तो बाप को ही चाह रहा था क्योंकि वो उसको रुपये ही नही दे रहा था। उनकी दो बीघा ज़मीन लाल डोरे में आ गयी थी जो सरकार ने नही ली थी। उसी में काम कर रहा था उसका बाप। बस थोड़ी सी देर बाप बेटे में तू तू मैं मैं हुई और जब बाप थोड़ी देर के बाद झुक के काम करने लगा तो लड़के ने बलि वाले बकरे की तरह बाप की गर्दन उड़ा दी। लेकिन माँ ने उसे देख लिया तो उसने सोचा कि माँ तो गवाह बन कर फांसी लगवा देगी। अतः उसने माँ की भी गर्दन उसी दराँती से काट दी। वो अब तक जेल में है। अभी तक जमानत नहीं हुई है। उसकी घरवाली कचहरी और वकीलों के चक्कर काटती फिर रही है। बच्चों का बिना फीस के नाम कट गया। अब दोनों बालक घर में बैठे हैं बिना पढ़ाई के। जब तक केस का निबटारा ना हो, बैंक से मुआवज़े का पैसा भी ना मिलेगा। " जगत सिंह ने कहा।

"अरे बहुत हो गयी ये इधर उधर की बात, एक बात बताऊँ, अपने गाँव में भी एक आध साल में ये ही हाल होने वाला है! या तो सब आपस में कसम उठा लो कि कोई गलत काम नही करेंगे। क्योंकि आज नही तो कल मुआवज़ा सरकार देगी। और अपना प्लान पहले से ही बना के रखलो। मुआवज़े मिलने के टाईम पे वकील और बैंक वाले चक्कर काटने शुरू कर देंगे। उनसे भी बच के रहना। " मास्टर टीकाराम ने बहस में शामिल होते हुए कहा।

"अरे कल तो सुबह पाँच वाली रेलगाड़ी में आड़ू पहलवान (आड़ू का नाम तो कुछ और था लेकिन एक दिन बाजार में अकेला दो किलो आड़ू खा गया था तभी से उसका नाम आड़ू पहेलवान पड़ गया था) की बड़ी मज़ाक बनी थी बिचारा अगले स्टेशन पर ही उतर गया और वापिस अपने गाँव गया। " फूले मुच्छडिया ने कहा।

"के हुआ था भाई" नानक नेवले ने तुरंत उसकी ओर गर्दन घुमाई।

"अरे यार तुम भी हँसोगे! हुआ ये था गाँव तो रेल लाईन के पास ही है उसका। लुगाई के पास सोया हुआ था सुबह पाँच वाली रेल ने सीटी मारी अब दो चार मिनेट का टाइम तो था ही, वह जल्दबाज़ी में पाजामा समझके वहीं रखे लुगाई के पेटीकोट को ही कंधे पे डाल के भाग लिया रेल पकड़ने को। उसने सोचा कि पाँच बजे की रेल में ज्यादा सवारी तो होती नही। रेलमें चढ़के ही पहन लेगा। रेल में चढ़के पाजामा पहरने लगा तो देखा कि उसमें तो एक ही पांवचा था। जब वह उसे पहिन रहा था तो वहाँ दो चार और जानने वाले बैठे थे। वे कहने लगे कि भाई आड़ू आज तो एक पांवचे का ही पाजामा लाया है। और ठहाका मारकर हँसने लगे।

अब पहलवान क्या करे ! बेचारा अगले स्टेशन पर उतर गया और वापिस घर आ गया। " फूले मुच्छडिया हो हो करके हँसने लगा "और उसका नाम अब आड़ू पहलवान पेटीकोट वाला पड़ गया।

"अरे फूले है तो तू भी मूरख ही। क्या बात चल रही थी और तूने पहलवान के पेटीकोट वाली बात बीच में घुसेड़ दी। अरे यहाँ तो मुआवज़े वालों की बात चल रही थी। " मास्टर टीकाराम ने कहा।

इस तरह बातों का रस लेते हुए चार पाँच गाँव के लोग उस स्टेशन से रेलगाड़ी में सवार होकर दिल्ली आते, शाम को वापिस जाते। सब आपस में एक दूसरे को जानते थे।

चौहलदा गाँव के संसार सिंह अपने पिता जगत सिंह के साथ रहते थे। इस समय संसार दिल्ली में पढ़ रहा था। उसका भी खर्चा था। रोज़ ट्रेन से ही कॉलेज जाता था। रात को आता था। उसे रोज़ ये तपस्या करनी पड़ती थी। उसके घर में इतना पैसा नहीं था कि वहाँ कमरा लेकर रहे या होस्टल में रहे। पढ़ने में मेधावी था इसलिए उसका दाखिला अच्छे कॉलेज में हो गया था। एक दो प्रोफेसर से उसके अच्छे संपर्क थे। अच्छे व्यवहार के कारण उनके घर भी आना जाना हो गया था। रसायन शास्त्र के प्रोफेसर बत्रा ने तो संसार से कह भी दिया था, कि बेटा जब भी तुम्हें देर हो जाये तो हमारे घर पर रुक जाया करो।

संसार सिंह के पिता जगत सिंह भले ही कम पढे लिखे थे। लेकिन सुलझे हुए इंसान थे। गाँव में किसी के भी दुःख-सुख में हमेशा साथ रहते। लेकिन अपने काम में भी पीछे न हटते। वह अपने पिता की दी हुई सीख को मानता था। जगत सिंह भी हमेशा संसार को ये ही समझाते कि बेटा अपनी सुरक्षा का ध्यान रखना और कोई गाली भी दे तो सहन कर लेना। क्योंकि आज नहीं तो कल बुरे का बुरा होता ही है।

उनके गाँव का रेलवे स्टेशन भी अहेरा ही लगता था। उनकी दस बीघा ज़मीन थी। और गाँव में एक छोटी सी दुकान थी, जिसमें दैनिक जरूरतों का सामान बेच लिया करते थे। जगत सिंह कोई भी निर्णय लेते थे तो उसमें सभी को शामिल करते थे और सब परिवार के सदस्यों का सहयोग लिया करते थे। इस तरह से उनका परिवार संगठित था और परिवार में किसी की किसी भी तरह की अलग विचार धारा नही थी और सभी संगठित होकर निर्णय लिया करते थे। इसी तरह उनका गुजारा चल रहा था। अब ज़मीन का मुआवज़ा सभी को मिलने वाला था। घर में परिवार के सभी सदस्य बैठकर सलाह कर रहे हैं। संसार सिंह ने पिता को बताया,

"सरकार मुआवज़ा देकर अपने कार्य की इतिश्री मान लेती है। इसके बाद किसानों के प्रति उस की कोई ज़िम्मेदारी नहीं होती। बस किसान को लाख दो लाख प्रति बीघा का मुआवज़ा देकर ज़मीन खाली करा लेती है जिससे उसे सौ गुना कीमत पर बिल्डर को बेचा जा सके। फिर बिल्डर उसी ज़मीन पर एक एक एकड़ में दो सौ फ्लैट्स बहुमंजिला फ्लॅट बनाकर पचास पचास लाख का एक एक फ्लैट बेचता है। रजिस्ट्री कराने में भी सरकार की कमाई होती है। इस तरह से गणना की जाये तो एक एकड़ का मुआवज़ा लगभग दस लाख हुआ जो किसान को मिला। उस ज़मीन पर बने दो सौ फ्लैट और एक फ्लैट की कीमत पचास लाख मान ली जाये तो भी सौ करोड़ रुपए बना लिए गए। अर्थात किसान यदि एक फ्लैट भी खरीदने जाये तो भी उसे मुआवज़े का पाँच गुना देना पड़ेगा और रजिस्ट्री का शुल्क अलग से देना होगा। "

"अब क्या किया जाये" जगत सिंह ने कहा - तेरी माँ तो अभी से घबरा रही है। जबसे इधर उधर से मुआवज़े वालों की उल्टी सीधी खबरें सुन रही है।

"इसमें घबराने की क्या बात है। अब सरकार से तो लड़ नहीं सकते, सरकार से संगठित होकर तो लड़ सकते हैं। सरकार अमीरों की ही सुनती है। हमें तो अपने भविष्य की योजनाओं पर काम करना है। जो रुपया मिलेगा उसका सदुपयोग करना है" संसार ने कहा।

"वो तो ठीक है भई, मैं ठहरा अनपढ़ किसाण आदमी। रुपये पैसे के हिसाब किताब में मैं कमजोर हूँ, तू अभी अपनी पढ़ाई पूरी कर ले। तेरी बहन की भी शादी करनी है। " जगत सिंह ने कहा।

"अभी तो मैं और पढ़ूँगी! अभी शादी नहीं करूँगी। मैं किसी पर निर्भर नहीं रहना चाहती " छोटी मंजू ने चहकते हुए कहा।

"अरी ! तू चुप कर तू सबकी दादी बनी हुई है" जगत सिंह की पत्नी सीमा ने उसे डाँटते हुए कहा। "माँ ये ठीक ही तो कह रही है। इसे पढ़ाएंगे जहां तक मंजू पढ़ना चाहेगी " संसार ने कहा। "लेकिन लड़कियों को ज्यादा दिन तक घर में बैठाकर तो नहीं रख सकते ना। " जगत सिंह ने कहा।

" पिताजी आप मंजू की चिंता ना करें उधर दिल्ली में हमारे साथ भी तो लड़कियां पढ़ती है। लेकिन वहाँ पर दाखिला लेने के लिए मंजू को अच्छे नंबर लाने होंगे वरना वहाँ दाखिला नहीं होगा। " संसार ने कहा।

“ठीक है, जैसा तुम उचित समझो, करो। लेकिन मैं तो खेती किसानी के अलावा कुछ जानता नहीं! ये छोटी सी दुकान है, इससे थोड़ा बहुत गुजारा हो जाता है। दिल्ली का खर्चा भी तो कम नही है। मंजू जब दिल्ली में पढ़ेगी तो इसे दिल्ली में ही रहना होगा। ये कोई तुम्हारी तरह रोज़ ट्रेन से तो नही आ जा सकती" जगत सिंह ने चिंता जाहिर की।

"पिताजी क्यों चिंता करते हो ? अभी तो दो साल हैं। तब तक मुआवज़े का भी फ़ाइनल हो जाएगा। मैंने सुना है कि जिन गाँवों की ज़मीन दो साल पहले ली गयी थी उनको भी कुछ और रुपया मिलेगा। और हमारे गाँव वालों को ज़मीन का उनसे दो से ढाई गुना तक मुआवज़ा मिलेगा। ये सब पैसा एक साल के अंदर ही मिलेगा " संसार ने कहा " और मैं अपने बत्रा सर से भी इस बारे में बात करूंगा।

"ये तेरे बत्रा सर कौन है?" जगत ने आश्चर्य से पूछा।

"बत्रा सर मेरे प्रोफेसर हैं। मैंने उनके एक दो काम कर दिये थे। वे मुझसे स्नेह रखते हैं। मैं उनके घर भी एक दो बार गया था। उनका बहुत बड़ा घर है दिल्ली में। " संसार ने कहा।

“एक बात मेरी भी सुन ले, रुपये की हम दूर कहीं ज़मीन खरीद लेंगे और खेती करेंगे। शहर का मोह छोड़ देते हैं। " जगत ने कहा

“ठीक है पहले पता तो कर लें कहाँ ज़मीन लेनी है। " संसार ने कहा

“वो तू मेरे ऊपर छोड़ दे। कल मैं मुरादाबाद की तरफ एक दो जगह जाऊँगा और उससे पहले भी गंगा की खादर में ज़मीन उपजाऊ भी है और बिकाऊ भी है बस वहाँ बाढ़ का खतरा रहता है। इसीलिए वहाँ की ज़मीन के दाम ज्यादा नही बढ़े। " जगत सिंह ने कहा।

अगले दिन संसार सिंह कॉलेज गया। प्रोफेसर बत्रा से मिलकर कहा– “सर आपसे कुछ सलाह लेनी है। "

"ठीक है संसार अभी मैं व्यस्त हूँ एक पीरियड और पढ़ा लूँ फिर मेरे साथ घर चलो वहीं चाय पर बात करेंगे। " बत्रा ने कहा

"ठीक है सर" संसार ने कहा।

एक घंटे बाद प्रोफेसर के साथ संसार उनके साथ गाड़ी में बैठकर उनके घर आ गया। उन्होंने पत्नी से संसार का परिचय कराया और चाय भिजवाने के लिए बोल दिया फिर दोनों ड्राइंग रूम में आकर बैठ गए। पहले बत्रा साहब बोले,

“बताओ बेटा क्या बात है?"

"सर गाँव में हमारी ज़मीन का मुआवज़ा मिलने वाला है। और हम सभी चिंता में हैं कि उन रुपयों से हम भविष्य के लिए क्या करें ? अभी छोटी बहन भी दसवीं में पढ़ रही है। वह भी आगे पढ़ना चाहती है। आप कुछ मार्ग दर्शन करें" संसार ने झिझकते हुए कहा।

" तुम्हारे पिताजी की क्या राय है?"

"सर वे तो ज़मीन के ही जानकार हैं और ज़मीन ही खरीदने की बात कर रहे हैं। क्योंकि यहाँ से लगभग साठ किलोमीटर दूर उससे पांच गुनी ज़मीन उसी कीमत में आ जाएगी जितना यहाँ मुआवज़ा मिलेगा। “ संसार ने कहा "अरे ये तो बहुत अच्छा होगा। " प्रोफेसर बत्रा ने कहा

"लेकिन जहां उनकी बात चल रही है वहाँ बाढ़ का खतरा रहता है। वैसे हर साल तो बाढ़ आती नही" संसार ने कहा

“तो वहाँ पर केला और धान की फसल बहुत अच्छी होगी। बेहतर होगा केला लगाओ। सरकार फसल के लिए लोन भी देती है। सब जानकारी इकट्ठा करो। ये सब काम तो तुम्हें करना चाहिए। बाढ़ का खतरा है तो फसल का बीमा करा लो। " प्रोफेसर बत्रा ने कहा।

“ये तो बहुत अच्छा होगा।’’ संसार चहका।

"चिंता मत करो। परिवार में विश्वास और एकता बनाए रखोगे तो हर मुश्किल से पार पा जाओगे। मेरा बचपन भी बहुत बुरा बीता है। मेरे तो माँ बाप बचपन में ही गुज़र गए थे। मुझे चाचा ने पढ़ाया है। दसवीं करने के बाद मैंने खुद ट्यूशन करके अपना खर्चा चलाया। और माध्यमिक शिक्षा के बाद ही मेरी नौकरी लग गयी थी। बस आगे पढ़ता रहा। नौकरी छोड़कर फिर से पढ़ाई की और अपना खर्चा जूनियर को पढ़ाकर निकालता रहा। फिर पीएचडी करके वर्षों से यहाँ पढ़ा रहा हूँ। मैंने तो अपने हिस्से की ज़मीन जायदाद चाचा के पास छोड़ दी है। क्योंकि उन्होंने मुझे कुछ न कुछ तो आसरा दिया था। मैं भी तुम्हारी तरह गाँव का ही रहने वाला हूँ। " बत्रा ने कहा।

संसार को प्रोफेसर की बातों ने बहुत प्रभावित किया उसने सोचा सर का तो गुज़रा जीवन बहुत संघर्षपूर्ण था। उसके सामने मेरा तो कुछ भी नहीं। तभी चाय लेकर नौकर आ गया और पीछे-पीछे डॉ. बत्रा की पत्नी आ गयी।

"बैठो दीपा इनसे मिलो ये मेरा छात्र हैं संसार सिंह। इसके पिताजी को भी ज़मीन का मुआवज़ा मिलने वाला है। " डॉ बत्रा ने कहा। डॉ. बत्रा आगे बताने लगे "कि देखो आजकल समाचार पत्रों में उल्टी सीधी खबरें पढ़ रहे है उधर गुड़गांव की तरफ एक सत्तर साल के एक बुजुर्ग ने शादी कर ली उसके घरवालों ने बहुत विरोध किया लेकिन वह न माना बाकायदा बारात लेकर गया। और मंदिर में पुजारी को पटाकर शादी कर ली। सबको दावत भी खिलाई। उसकी नई नवेली तीस साला दुल्हन कुछ ही दिनों में लाखों का चूना लगा के भाग गयी। अब फिर रहा है थाना पुलिस करता। उधर दारोगा जी ने भी उसे घुड़क दिया कि साले पैसे के मद में चूर होकर बुढ़ापे में जवानी उफान मार रही है चल भाग यहाँ से, फिर जैसे तैसे एक वकील को साथ लेकर गया तब रिपोर्ट लिखी गयी।"

"इसी को कहते हैं लक्ष्मी सर चढ़कर बोलती है।"

दीपा ने कहा

"सर अब मैं निकलूँ? रेल पकडनी है।" संसार ने कहा।

"अरे कल चले जाना, यहाँ जगह की कमी नहीं है। ऊपर दो कमरे बने हुए हैं। एक में नौकर रहता है। दूसरा खाली है बिस्तरा लगा हुआ। वह विशेष रूप से मेहमानों के लिए ही बनवाया हुआ है। उसमें आराम करो" बत्रा साहब कहने लगे। "ठीक है सर" संसार ने कहा।

संसार के पिता को लगभग पचास लाख का मुआवज़ा मिला। जो गाँव में दूसरों से कम ही था क्योंकि उसकी ज़मीन भी कम थी। लेकिन उससे पाँच गुणी यानि कि 10 एकड़ खेती की ज़मीन उसने गंगा के खादर में खरीद ली, और उसमें खेती करने के लिए तैयारी करनी शुरू कर दी।

लगभग दो महीने बाद जगतसिंह ने हसनपुर रहरा में एक बड़ा मकान भी ले लिया। यहीं पर उसने ज़मीन खरीदी थी। इसके लिए उसे अपने गाँव के दोनों मकान बेचने पड़े। मकान की बिक्री से बचे हुए रुपयों में से कुछ रुपये उसने संसार सिंह को दे दिये। अब संसार ने कालेज के पास ही कमरा ले लिया और मेहनत से पढ़ने लगा। अब रोज़ रोज़ ट्रेन पकड़ने के झंझट से भी मुक्ति मिली। उसके पूरे परिवार ने गाँव छोड़ दिया था और मकान लेकर हसनपुर रहरा रहने लगा था। मंजु का दाखिला भी वहीं लड़कियों के स्कूल में हो गया।

जगत सिंह ने संसार को कह दिया कि मंजु की यहाँ की पढ़ाई पूरी होने के बाद वह इसको भी अपने पास दिल्ली ही बुला लेना। यूँ तो संसार सिंह अपना खर्चा ट्यूशन से निकाल लिया करता था। फिर भी उसने अपना बैंक में खाता खुलवाकर रुपये अपने खाते में डाल दिये। अब रुपयों की उसके सामने कोई समस्या न थी।

संसार सिंह का एमएससी करने के बाद पीएचडी में दाखिला हो गया, और वह भी डॉ बत्रा के अधीन रहकर ही। डॉ बत्रा भी खुश थे कि उन्हें संसार जैसे होनहार छात्र को पढ़ाने का अवसर मिल गया था।

एक दिन जगत सिंह को कुछ उन्नत किस्म के टमाटर के बीज लेने के लिए मुरादाबाद जाना पड़ा। वहाँ बाजार में भूख लगी। एक ढाबे में वह खाने बैठ गया। तभी एक भिखारी उसके पास आया। और खाने मांगने लगा। जगत सिंह ने कहा, "खाना तो मैं तुम्हें खिला दूँगा पर तुम मेरे यहाँ खेती का काम कर लोगे। "

"मैं तो काम की ही तलाश में ही भटक रहा हूँ" उसने कहा

"कहाँ से आए हो" जगत सिंह ने कहा

"अब क्या बताऊँ, आया तो मुजफ्फरपुर से हूँ। मुझे घर से बेटों ने निकाल दिया। अब ट्रेन में बैठकर वहाँ से दिल्ली आया हूँ और दिल्ली से यहाँ तक। एक दिन तो मन किया कि ट्रेन के नीचे कटकर ही जान दे दूँ, पर ये भी पाप है" इतना कहकर वह व्यक्ति रोने लगा। "अच्छा अब रोना बन्द कर ! मेरे साथ चल, रोटी टुकड़े की तो कोई कमी नहीं है। पर मेरे साथ-साथ खेती का काम भी करना पड़ेगा। जैसा मैं और मेरा परिवार खाता वैसे ही तुम भी खाना। भीख माँगना छोड़ दे, ऊपर वाले ने चाहा तो अगले साल से पैदावार में तुझे हिस्सा भी दे दिया करूंगा" जगत ने कहा।

"ठीक है चौधरी साहब"

"नाम क्या है तेरा"

"लड्डू सिंह" भिखारी बोला

"लोग तेरा नाम सुनकर तो ये कहेंगे कि नाम तो लड्डू रखवा लिया और भीख मांग रहा है।"

"क्या करूँ चौधरी वक्त की मार है मुझपे।"

"चिंता मत कर जो बीत गया उसे भूल जा।"

जगत सिंह लड्डू सिंह को घर ले आया। घर आकर उसे लड्डू से पता चला वह केले की फसल उगाने में माहिर है और भी

कई फसलों का जानकार है। उसकी सलाह पर खेती बहुत अच्छी होने लगी। जिससे जगत सिंह की आमदनी भी दोगुनी हो गयी। लड्डू ने एक दिन ये कहा कि चार पाँच भैंस बांधकर डेयरी की भी शुरुआत की जाये तो अच्छा होगा। इससे उनकी कमाई और बढ़ गयी डेयरी का काम भी लड्डू देखने लगा।

उधर एक दिन संसार सिंह का फोन आया कि उसका अमेरिका जाना पक्का हो गया हैं जहां उसे कोई पेपर प्रस्तुत करना है। उससे पहले वह मन्जू का दाखिला कराकर लड़कियों के छात्रावास में छोड़ देगा। जहां से वह आगे की पढ़ाई जारी करेगी।

जगत सिंह को गाँव छोड़े कई साल हो गए थे। गाँव की याद भी सता रही थी। वह गाँव जाकर गाँव के हालात देखना चाहता था। लेकिन फुर्सत न मिलने के कारण न जा सका। पत्नी ने कहा अब तो गाँव में कोई नही है। किसके यहाँ रुकेंगे ? अब हसनपुर रहरा में भी जगत सिंह की काफी इज्ज़त हो गयी थी। कुछ किसान खेती में उसकी सलाह लेने आते थे। मकान भी बहुत विशाल बना लिया था। जिसमें कई नीम और जामुन के पेड़ भी लगे थे। दो चार मुड्ढे पेड़ों की छाया में पड़े रहते। मकान भी गाँव के बाहर खुले में बना हुआ था।

एक दिन गाँव से नेवला (नानक सिंह) आया, नेवले ने कहा

"क्या बात है जगत चाचा तुमने पीछे मुड़कर ही नहीं देखा यहाँ पर तुम तो सकूँन की ज़िंदगी जी रहे हो"

"हाँ भाई नेवले वहाँ की सुणा। गाँव के क्या हाल हैं?"

"हाँ अब तो सब किराया खा रहे हैं, और दारू पी रहे हैं। बड़ी-बड़ी गाड़ियों में उनके लड़के घूम रहे है। किराया भी लाखों में आता है, रोज़ लड़ाई झगड़ा चलता रहता है" नेवले ने कहा।

"धान्दू के क्या हाल हैं?"

"धान्दू तो जेल में है"

" अरे ! क्यों"

"अपने बाप की हत्या के जुर्म में। "

"वो तो ऐसा नही था। "

"उसका बाप दूसरी शादी की बात कर रहा था। इसीलिए धान्दू ने गोली मार दी, कह दिया कि मेरे जीते जी शादी नहीं होगी और बाप को गोली मार दी" नेवले ने हुक्के में दम मारकर कहा।
"ये तो बहुत बुरा हुआ" जगत ने कहा।

"चार लोग कैंसर से मर गए। और पाँच और लाईन में हैं" नेवले ने कहा।

" अरे पहले तो इस तरह कोई नहीं मरा" जगत ने कहा।

"बताते हैं जब से घर घर में मोबाइल फोन के टावर लगवाए हैं तबसे ही ये बीमारी फैलनी शुरू हुई" नेवले ने बताया।

"ये क्या हो गया है गाँव वालों को " जगत सिंह ने दुखी होकर कहा।

"गाँव में सबने अपने अपने घरों के पेड़ काटकर कमरे बनवा लिए हैं। बड़ी बड़ी अट्टालिकाएँ गाँव में खड़ी हुई हैं लक्ष्मी सब पर बरस रही है" नेवले ने कहा।

"लेकिन चैन का टुकड़ा तो छिन गया "

"हाँ बात तो ठीक है। मुझे बड़ी मुश्किल से तुम्हारा पता मिला है। मेरी बेटी की शादी है तुम्हें और चाची को जरूर आना है। "

"वो तो ठीक है नेवले, मैं यहाँ इतना बड़ा काम धाम किस पर छोडकर जाऊंगा ? हाँ मैं फुर्सत मिलते ही जरूर आऊँगा तुम मेरे के कन्यादान के रुपये लेते जाओ। यदि मैं न आ सका तो मेरी तरफ से बिटिया को दे देना "

"नही चाचा आपको ही आना है। "

" तो मैं दिन-दिन में ही आ सकूँगा, शाम तक वापिस आना होगा। "

"ठीक है चाचा, पर आना जरूर। अब मैं चलता हूँ"

" अरे खाना तैयार है खाकर जाना" जगत की पत्नी ने पानी का गिलास रखते हुए कहा।

"ठीक है चाची तुम कहती हो तो "

नानक नेवला खाना खा रहा था। और जगत सिंह सोच रहा था कि क्या से क्या हो गया गाँव में!

"चाचा क्या सोच रहे हो?" नेवले ने गर्दन घुमाते हुए कहा

"नेवले, धान्दू के बारे में सोच रहा हूँ वो तो ऐसा नही था ! "

" अरे चाचा तुम बहुत ठीक समय पर निकले, वरना अब गाँव का माहौल रहने लायक नहीं है। सबके लड़के शराब के नशे में चूर रहते हैं रात में पता नही क्या क्या करते हैं। मैंने तो सुना हैं कोई दवाई आती है जो दस से पंद्रह हजार की पुड़िया में आती है उसका भी नशा करने लगे हैं। "

जगत सिंह अपने दोनों हाथों से सर को थामें हुए थे।

362, FF-1 शक्ति खंड -3, इंदिरापुरम गाजियाबाद

उत्तर प्रदेश पिन 201014,

(जी डी गोएनका स्कूल गेट न 3 के सामने),

मो. 9650991771

कहानी

भोग्या

नीना अंदौत्रा

नावरा मन की उथल पुथल में उलझी हुई थी। कितने दृश्य सामने आकर ठहर रहे थे और कितने उसे असहाय होने का एहसास करवा रहे थे। एक डर था जिसे अब सामना करने की उसकी हिम्मत नहीं थी पर न चाहते हुए भी सामना करने जा रही थी। कुछ वादे निभाने के लिए किए जाते हैं ऐसे ही वादे नावरा के हिस्से भी आए थे। पिछले हफ़्ते फ़ोन आया था पापा बीमार हैं तो मौसम की तब्दीली का असर सोच कर ज़्यादा नहीं उलझी थी पर रात को जैसे ही ज़्यादा तबियत ख़राब होने का पता चला तो आनन-फानन में टिकट करवाई ताकि जल्दी पहुंच सके। बोझिल सफ़र करने के बाद जैसे ही हवाई जहाज़ धीरे-धीरे रनवे की ओर बढ़ने लगा नावरा का दिल बैठने लगा जबकि जहाज़ स्थिर था। धीरे - धीरे ऊंचाई कम हो रही थी। पांच वर्षीय रौनाया नावरा से चिपकी तो नावरा को कुछ राहत महसूस हुई। जहाज़ के पहिये रनवे पर टकराए और एक हल्का झटका महसूस हुआ। जहाज़ आख़िरकार रनवे पर रुक गया पर नावरा की घबराहट फिर भी बढ़ती ही जा रही थी।

एयरपोर्ट से बाहर निकालकर उसने एक नज़र दौड़ाई, दूर तक कोई भी अपना नज़र नहीं आया था। हमेशा पापा ही तो आते थे लेने, यह पहली बार था वह नहीं आए थे।

नावरा ने भी अपने आने का किसी को नहीं बताया था क्योंकि दूर के सफ़र में तो सबसे बड़ी चुनौती टिकट ही होती है जिसका कुछ भी निश्चित तौर पर कहना मुश्किल होता है। नावरा ने टैक्सी की और रौनाया को गोद में लेकर बैठ गई। जैसे जैसे घर पास आ रहा था उसका दिल बैठता जा रहा था। पिछली बार भी कितनी जल्दबाज़ी में आना पड़ा था और फिर वही हुआ था जिसका डर था। सोचते हुए उसने गहरी साँस ली। रात जागते हुए ही कटी थी। अजीब सी मनहूसियत छाई रही। जिससे पीछा छुड़ाने की हर कोशिश बेकार हुई थी। वही रास्ता था जिस पर से वह कई बार गुज़री थी पर आज वही रास्ते अजनबी लग रहे थे। टेसू के फूल पहली बार नावरा का ध्यान अपनी ओर नहीं खींच पाए थे जबकि यह लाल सुर्ख फूल सदा उसे आकर्षित कर अपने साथ बांध लेते थे। मन का कोलाहल शांत नहीं हो रहा था। छोटी-सी रौनाया माँ के गालों पर बहने वाले चोर आंसू देखते ही पोंछने लगी। नावरा बेटी से अपना दुख छुपाना चाहती थी पर छुपा न सकी।

कुछ देर में टैक्सी घर के बाहर खड़ी हो गई। इस बार हमेशा की तरह उसके स्वागत के लिए कोई नहीं था। मन व्याकुल हो गया। जल्दी से उसने टैक्सी से सामान बाहर निकाला और डग भरती हुई घर में दाख़िल हो गई। सामने से रूपेश आ रहा था जिसने आते ही नावरा के पैर छुए और मुँह से भी "चरणवंदना भाभी" कहते हुए रौनाया को उठाते हुए अपने कंधों पर बिठा लिया।

नावरा मुँह में आशीर्वाद देते हुए बोल पड़ी,"पापा कैसे हैं ? "

"रात से तबियत ज़्यादा ख़राब है। बार-बार आपका नाम ले रहे थे इसलिए आपको फ़ोन करना पड़ा। " रूपेश बोला और अपलक नावरा का उतरा हुआ चेहरा देखता रहा।

"आपने आने का बताया क्यों नहीं ? मैं लेने आ जाता। " रूपेश ने नावरा के हाथ से बैग लेते हुए कहा।

"घर में तुम्हारी ज़रूरत होगी इसलिए....। "

"चाचू चाची कहाँ हैं ? मुझे चाची के साथ खेलना है। " रूपेश के कंधे पर बैठी रौनाया ने कहा, जिसे देख नावरा चुप हो गई।

"हम रौनाया को चाची के पास लेकर चलते हैं। रौनाया चाकलेट खायेगी। " रूपेश लय में बोलता हुआ रौनाया को सामने के घर में ले गया।

"पापा...। "

"नविया आ गई तू। तेरा ही इंतज़ार कर रहा था। अब कहीं जाकर ठंड पड़ी है मुझे। अब मरना सुखाला हो जायेगा। " कांपती आवाज़ में शब्द लुढ़कते हुए निकले तो साथ में नावरा के आंसू भी निकल पड़े।

"क्यों रोती है मरजानिये। एक दिन सबको जाना है। दिल छोटा नहीं करते। " मौन नावरा ठंडे पैर पकड़ कर बैठी रही।

बिस्तर पर पड़ा व्यक्ति उसका क्या लगता है यह सवाल उसके भीतर लगातार चल रहा है। जवाब है सब कुछ और कुछ भी नहीं। किस रिश्ते को वह सालों से निभा रही थी यह वह ख़ुद भी नहीं जानती थी पर क्या उसी ने निभाया था? नहीं, इस रिश्ते को इस घर की एक एक ईंट ने, हर शख़्स ने निभाया था।

"नावरा कब आई तू? चल कुछ खाकर आराम कर ले पहले।" छोटी बुआ ने कमरे में दाख़िल होते हुए कहा। नावरा ने ज़बरदस्ती की मुस्कान के साथ बुआ को देखा और जैसे ही पैर छूने के लिए झुकी बुआ ने उसे गले से लगा लिया।

"तू गले लगती है तो ऐसा लगता है जैसे रणजे ने गले लगा लिया हो।" बोलते हुए बुआ का गला रूंध गया। बिस्तर पर पड़े व्यक्ति को नावरा ने नज़र भर कर देखा तो वह गहरी नींद में थे।

"अच्छा हुआ तू आ गई। दो दिन से तबियत बहुत ज़्यादा ख़राब हो रही है। बेसुध होकर कभी भाभी से बातें करने लगते हैं तो कभी रणजे से। कभी सुध भूल जाते हैं। किसी को भी पहचानते नहीं तो कभी पहचान लेते हैं। कल से तेरा नाम कई बार लिया तो रूपेश को कहा कि फ़ोन कर दे। सारी उम्र दुख में कटी है मेरे भाई की, कहीं इस घड़ी तो शांति नसीब हो।" बोलते हुए छोटी बुआ फफक पड़ी। नावरा निश्चेष्ट बुआ के पास बैठी रही। सब उदासी उसके चेहरे पर फैल गई।

"हाथ मुँह धोकर कुछ खाकर आराम कर। सफ़र करना कौन-सा आसान होता है।" छोटी बुआ ने नाक के नथुनों से गहरी साँस भरी और उठकर रसोई की और चली गई।

"तुम्हारा कमरा कल शाम को ही साफ़ करवाया है। सब रखा है वहाँ। अगर कुछ चाहिए होगा तो बता देना।" रसोई से छोटी बुआ ने ज़ोर से आवाज़ देते हुए कहा। नावरा घर की दीवारों को ध्यान से देखती रही। उसके सामने ही तो बना था यह मकान। देखते देखते ही हंसता हुआ मकान नीरसता में डूब गया था। अब अपने अगुवा से भी वंचित हो रहा था। नावरा का मन भर गया। वह खलबलाती हुई अपने कमरे में चली गई। वही कमरा जो वर्षों पहले उसका और रणजे का था पर कभी एक साथ रहना नसीब नहीं हुआ था। दूधिया परदे खिड़कियों पर आज भी उसी तरह से फैले हुए थे जैसे तब फैले थे जब रणजे के साथ आख़िरी बार इस कमरे में नावरा आई थी।

"तुम्हें पता हमारी शादी की बात चल रही है।"

"शादी और तुमसे।" नावरा ने आँखों की पुतलियों को दाएँ से बाएँ करते हुए कहा था।

"मेरे जैसा दामाद कहाँ मिलेगा तुम्हारे घर वालों को।"

"ओहो, ज्यादा उड़ो मत।"

"इनकार करना है तो अभी बता दो।"

"सोचकर बताऊँगी...।" ख़ाली कमरे में दो आवाज़ें गूंजने लगी तो नावरा को अपने बचपन का साथी याद आ गया। उस दिन उसे एहसास हुआ था खुद के बड़े होने का। कोई हलचल हुई थी भीतर तक और रणजे को देखने का उसका नज़रिया बदल गया था। जिस रणजे के साथ वह बिना किसी संकोच के कुछ भी कह देती थी उसके लिए रंगीन सपनों की झालर आँखों पर बिछ जाती।

माँ को हिम्मत करके पूछा तो माँ ने झट से कह दिया था,"घर के बड़ों की बातें हैं गुड्डो इसलिए कोई सवाल जवाब नहीं और वैसे भी रणजे अच्छा लड़का है।" माँ पसंद नपसंद पूछने की जगह रणजे का स्तुति गान गाने लगी थी। जिसे सुनकर नावरा हँसने लगी थी।

"तुम्हारे एम। ए। के पेपर हो जाने के बाद तुम्हारी शादी की तारीख़ पक्की हो जायेगी। रणजे की भी ट्रेनिंग हो जायेगी। इसलिए अब बड़ी हो जा गुड्डो।" माँ ने घर के काम समेटते हुए कहा था।

उस दिन के बाद रणजे और नावरा का रिश्ता एक दूसरे के लिए बदल गया था। बातें बदल गई थीं, एहसास बदल गए थे। दो मिनिट रणजे से बात न होती तो नावरा बेचैन हो जाती।

"घर का काम लगा है। पिताजी कहते हैं सब नावरा की पसंद का होना चाहिए। बताओ अपना कमरा कैसा चाहिए तुझे।" सुनकर नावरा के अंदर एक ठंडी लहर दौड़ी थी। रणजे के बहुत पूछने पर नावरा बोली थी,"बड़ी - बड़ी खिड़कियां जिनके ऊपर क्रीमी परदे हों और हां खिड़कियां जिस ओर खुले सामने हरी भरी पहाड़ियां होनी चाहिए।" समय पंख लगाकर उड़ गया था। नावरा को अब रणजे के अलावा कोई नहीं दिखता था। दुनिया जहान की बातें जब तक रणजे से न हो जाती तब तक सूरज निकलने से लेकर डूबने तक में कमी दिखती।

दरवाज़े पर आहट हुई। देखा तो छोटी बुआ कमरे में खाना लेकर आ रही थी। कमरे में आते ही बोल पड़ी,"सोचा तुम्हें कमरे में ही खाना दे दूं। पता नहीं कब क्या हो जाए।" मेज़ पर खाना रखते हुए बुआ ने कहा।

नावरा सामने की दीवार को नज़र गड़ाए देख रही थी। जिस पर उसने हमेशा कुछ तस्वीरें देखी थीं पर अब वहाँ सिर्फ़ एक दो तस्वीरें थीं पर परिवारिक तस्वीरें नहीं थीं।

"तुम्हारी और रणजे की तस्वीर ख़राब हो गई थी और.. । रौनाया भी सवाल करती इसलिए उतार दी थी । " बुआ ने जैसे नावरा के मन के सवाल पढ़ लिए थे । नावरा को अपनी तस्वीर का हटाया जाना समझ आ रहा था पर रणजे की कोई भी तस्वीर नहीं थी । टेबल पर रखा सिल्वर का फ्रेम भी ख़ाली था जो नावरा ने कभी रणजे को उसके जन्मदिन पर गिफ़्ट किया था । बाहर से रौनाया चहकती हुई नावरा से चिपक गई । उसके पीछे रूपेश भी अपनी पत्नी के साथ कमरे में दाखिल हुआ । शादी के बाद दूसरी बार नावरा रूपेश की पत्नी से मिल रही थी । साल भर पहले सबके बहुत कहने पर शादी में आई थी नावरा । आज भी उस घर में उसकी पहचान रणजे के नाम से थी । आज भी रणजे उसके साथ ज़िंदा था ।

"भाभी यह कमरा शीतल को बहुत पसंद है इसलिए कुछ दिन बाद मैं इसमें शिफ़्ट हो जाऊंगा । " बोलते हुए रूपेश अचानक चुप हो गया । छोटी बुआ आँखें तरेरते हुए कमरे से बाहर चली गई । तस्वीरों का हटाया जाना नावरा को कुछ हद तक समझ आ गया था । कितनी दौड़ है जीवन में, किसी को हटाकर कोई उस स्थान पर बसर होना चाहता है । रूपेश दूर की रिश्तेदारी में सत्यजीत के भाई का बेटा था जिसे कुछ साल पहले सत्यजीत ने अपना वारिस बनाया था ।

रूपेश और शीतल अपनी शादी की बातें सुनाते हुए अपनी एल्बम नावरा को दिखाने लगे जिसे देखने में नावरा की कोई रुचि नहीं थी पर फिर भी वह देख रही थी ।

"मम्मा मैं दादू जी से नहीं मिली । " रौनाया ने अचानक अपनी ओर सबका ध्यान खींचते हुए कहा ।

"दादू अभी सो रहे हैं । थोड़ी देर बाद चलते हैं । "

"नहीं, मैं अभी मिलूंगी, अभी मिलूंगी । " नावरा ने मौका देखा और जल्दी से रौनाया को लेकर नीचे चली गई । दिन ढल चुका था । कमरे से ज़ोर से बोलने की आवाज आ रही थी, "सुधा. । बैठी रहेगी । चाय का टाइम हो गया चाय बना अब । " नावरा को समझने में देर न लगी कि पापा बेहोशी में बोल रहे हैं ।

रौनाया नन्हे कदमों से कमरे को मापती हुई दादू दादू कहती हुई सत्यजीत के बिस्तर पर जाकर बैठ गई ।

"सुधा रणजे को संभाल । बिस्तर गंदा कर रहा है । " बेसुध सत्यजीत बोले जा रहा था ।

नावरा को अपनी दादी की बातें याद आ गई जो कहती थी आख़िरी वक्त में हमें अपने सब सगे संबंधी दिखाई देते है । क्या सच में ऐसा होता है । क्या सच में रणजे भी इस कमरे में हो सकता है ? "ओह रणजे.. । " नावरा ने गहरी साँस भरते हुए कहा और फिर सत्यजीत के पैर देखने लगी । हाथ लगाकर देखा तो बर्फ़ की तरह ऊपर तक ठंडे थे । सूजन हद से ज़्यादा आ गई थी । रंग पीला पड़ गया था । कुछ देर में वह सो गए । छोटी बुआ साथ बैठी औरतों को बता रही थी कि यह सो नहीं रहे हैं लोक परलोक के चक्कर काट रहे हैं । खाना भी छोड़ दिया है । नावरा सुनते हुए कमरे से बाहर चली गई । एक तसल्ली थी कि जब वह आई तो सत्यजीत ने उसे पहचान लिया था । रणजे की माता जी जो आठ महीने पहले स्वर्गवास हुई थी नावरा को वह याद आ गई । उन्होंने आख़िरी वक्त तक नावरा को पहचान रखा था । नावरा की गोद में ही आख़िरी साँस ली थी उन्होंने । सोचते हुए नावरा की आँखों से बदली बरसने लगी । क्या नाता होगा इस घर से उसका बहुत सोचने पर भी उसे कभी समझ नहीं आया था– प्रेम संबंध कहाँ समझ आते हैं । इस घर से उसका प्रेम संबंध ही था इसलिए तो वह दूर होकर भी इस घर से कभी दूर नहीं हो पाई थी । आत्मा सदैव प्रेम की ऋणानुबंधी रहती है । सारे ऋण उतर जाते हैं । प्रेम का ऋण कभी नहीं उतरता । यह प्रेम ऋण ही था जिसको चुकाने नावरा आती थी ।

रात ढल चुकी थी । रूपेश और उसके माता पिता सत्यजीत के कमरे में बैठे हुए थे । सबके हाव-भाव कह रहे थे कि किसी भी घड़ी कुछ भी हो सकता है । सबको बारी-बारी जागना था । रात को सब नहीं सो सकते । छोटी बुआ के कहने पर नावरा अपने कमरे में आ गई । सोच में डूबी नावरा एक अलग ही दुनिया में पहुँच गई थी । मृत्यु ही सच है आख़िर उसने ही तो नज़दीक से देखा था । सत्यजीत के पास बैठे हर व्यक्ति को उसकी मौत का इंतज़ार करते देखा था । कैसे उस व्यक्ति की मौत का इंतज़ार किया जाता है जिसके साथ जीवन जिया होता है जबकि सब जानते हैं मौत के बाद वह व्यक्ति कभी भी देखने को नहीं मिलेगा ।

जन्म और मरनी में एक बात समान है और वो है इंतज़ार । दोनों ही स्थितियों में लोग एक नए चरण की शुरुआत का इंतज़ार करते हैं, चाहे वह एक नए जीवन की शुरुआत हो या एक जीवन के अंत की शुरुआत । सोचते हुए नावरा ने रौनाया को बांहों में भर लिया ।

घर में जश्न जैसा माहौल था । शादी की तैयारियां शुरू हो गई थी । नावरा के एग्जाम शुरू होने वाले थे,"सब लड़कियों के ऐ जी,

ओ जी मिलने आते हैं तुम मुझे मिलने भी नहीं आ सकते। कम से कम एग्ज़ाम शुरू होने से पहले एक बार शक्ल ही दिखा देते।" नावरा ने उलाहना देते हुए कहा था।

फ़ोन के दूसरी ओर से जो जवाब आया था उसकी नावरा को उम्मीद नहीं थी,"मैं परसों तक तुम्हारे हॉस्टल के बाहर पहुँच जाऊंगा।" नावरा झूम उठी थी। उस रात की बातें आज भी नावरा को ऐसे याद थी। दोनों तकदीर से अनजान नहीं जानते थे यह बातचीत दोनों की आख़िरी बातचीत है। नावरा ने कितना इंतज़ार किया था पर रणजे बिना उसे बताए अपने अगले सफ़र के लिए निकल चुका था। किसी ने भी नावरा को रणजे की अचानक एक्सीडेंट में हुई मौत के बारे में नहीं बताया था। जब एग्जाम के बाद नावरा घर पहुंची तो सब जानकर वह पत्थर हो गई। हंसना भूल गई। घंटों बैठकर रोती, ख़ुद को कोसती पर उसके बचपन का साथी रणजे नहीं आता। दो साल बाद परिवार ने नावरा की शादी करने की कोशिश की पर कहीं भी बात न बनती। बहुत से रिश्ते इसलिए होते-होते रह जाते क्योंकि नावरा की शादी के कुछ महीने पहले ही उसके मंगेतर की मृत्यु हो गई थी जिसके कारण बहुत लोगों का कहना था कि उसकी कुंडली में ही दोष है। वह मनहूस है। सत्यजीत जो नावरा के पिता के गहरे दोस्त थे उन्होंने ही अपनी दूर की रिश्तेदारी में नावरा का रिश्ता करवाया। नावरा की इस सब में इतनी भूमिका थी कि वह सिर्फ़ कठपुतली बनकर रह गई। जिसे जब भी रोने का बहाना मिलता तो ज़ोर-ज़ोर से रो लेती। आज भी सब याद करके वह रोने लगी,"क्यों चले गए ? क्यों ?" सिसकी दबाते हुए उसने आँखें बंद कर लीं। अचानक कमरे से रणजे के कितने चेहरे उभर आए।

"रणजे ..।" मुस्कुराता हुआ चेहरा नावरा ने हाथों में भर लिया।

"क्यों खुलकर नहीं जीती हो। जिया करो। आख़िर क्यों तुमने लतिका होना चुन लिया ? क्यों वही सब याद करती हो, जो भूल जाना चाहती हो ?"

"तुम ही बताओ कैसे जिऊँ खुलकर ? क्या है मेरे पास ? तुम तो चले गए और मुझे दे गए अकेलापन। जिसे जिसके साथ बांटती हूँ, वही और ज़्यादा अकेला कर देता है।" डबडबाई आँखें रणजे को देखती रहीं।

"मुझे याद है जब तुमने पहली बार परिंदे कहानी पढ़ी थी तो कैप्टन गिरिश नेगी की प्लेन दुर्घटना में मौत का पढ़कर फफक फफक कर रोई थी।"

"क्या पता था मुझे मौत इतनी डरावनी होती है। मैंने तो तुम्हारे नाम के हर शख़्स को भी बहुत ध्यान से देखा कि शायद उसमें से थोड़े बहुत मेरे हिस्से का रणजे हो पर नहीं ...। कुछ धोखे हम स्वयं अपने लिए चुन लेते हैं। जब कोई विकल्प नहीं रहता तो उन धोखों से ही सांठ - गांठ करनी पड़ती है। सच एक ही था जीवन का और वह तुम थे। तुम्हारे जाने के बाद मैं भोग्या बन गई। किसी ने झूठे रिश्ते जोड़कर भोगा तो किसी ने वक्त गुज़ारने के लिए पर मेरे मन का ख़ाली फ्रेम ख़ाली ही रह गया। कोई ऐसा न मिला जो तुम्हारा ख़ालीपन भर देता और मैं जी उठती। असल में मैं तुम्हारे साथ ही मर चुकी हूँ। अंतर सिर्फ़ इतना है तुम्हें मुक्ति मिली और मुझे भटकाव। कोई ठौर न मिला।" तड़पती हुई नावरा रणजे के साथ लिपट गई। रणजे उसे सहलाता रहा। उसके ज़हर बने आंसू पोंछने लगा।

"कितनी बातें थी जो सिर्फ़ तुमसे की जा सकती थीं, जो सिर्फ़ तुम सुन सकते थे। जो सिर्फ़ तुम्हारे लिए थीं वह सब मौन हो गईं। वो अनकही बातें तुम्हें ढूँढती हैं और हमेशा ढूँढती रहेंगी क्योंकि वो सब सिर्फ़ तुम सुन सकते थे। जो अकेलापन मेरे हिस्से आया उसका कोई तोड़ नहीं था ..। नहीं था।" नावरा की सिसकी रुलाई में बदलने लगी कि तभी कराहने की आवाज़ आई।

"मुझे जाना होगा नावरा। पापा को बहुत तकलीफ़ है। वक्त आ गया है उनको तकलीफ़ से मुक्ति मिले।" नर्म कपोल पर स्नेह स्पर्श हुआ और टेबल पर रखा चांदी का फ्रेम नीचे गिर गया। नावरा की तड़क से आँखें खुल गई। अपनी गाल पर हाथ रखते हुए नावरा बोल उठी,"रणजे।" गाल की छुअन को वह अभी तक महसूस कर रही थी। छोटी बुआ दरवाज़ा खटका रही थी। बिस्तर से जल्दी से निकलकर नावरा ने दरवाज़ा खोला और जल्दी से सत्यजीत के कमरे की ओर चली गई।

सत्यजीत को नीचे बिछाए गए कंबल पर लिटाया गया था। दान पुण्य करवाकर कुछ सामान उनके सिरहाने रखा हुआ था। रूपेश की माता जी आटे का दिया बनाकर जल्दी से लाईं और जलाकर सिरहाने रख दिया।

"नावरा देख रणजे आया है।" बिल्कुल साफ़ आवाज़ में सत्यजीत बोला। इतनी साफ़ आवाज़ तो नावरा ने पिछले कल से एक बार भी नहीं सुनी थी। छोटी बुआ ने नावरा को गंगाजल दिया और इशारे से मुँह में डालने को कहा। बहते आंसुओं के साथ नावरा धीरे-धीरे गंगाजल पिलाने लगी। एक चम्मच पिलाया और जैसे ही

दूसरा पिलाया तो वह मुँह से बाहर आ गया। साँस गले में अटक गई थी। आँखें देखते ही देखते पत्थर हो गईं। नावरा सत्यजीत को बार-बार हाथ लगाकर देखती है। यक़ीन करना मुश्किल हो रहा था कि उसकी इस घर से जुड़ी आख़िरी कड़ी टूट गई थी जिसने इस घर से अब तक नावरा को जोड़े रखा था।

रणजे के जाने के बाद इस घर ने उसे अपने साथ जोड़े रखा था। किसी व्यक्ति की पूर्ति कोई घर, छत, दीवार भी करता है। सालों बाद नावरा को अहसास हुआ। वह आज रणज़े से पूरी तरह बिछड़ गई। कोई आँसू इस दुख को बयाँ नहीं कर सकता था।

–अहमदाबाद, मो. 7340972732

नाटक

"सार"

देवेश आदमी

सीन 1: शादी का मंडप

(शादी का उत्सव चल रहा है। हल्की-फुल्की चहल-पहल है। लोग हंसी-मज़ाक कर रहे हैं, पंडित जी मंत्र पढ़ रहे हैं। शादी की रस्में हो रही हैं। एक 7 साल का लड़का (राहुल) और 8 साल की लड़की (रश्मि) मंडप के पास खड़े हैं।)

राहुल: (रश्मि की तरफ देखते हुए)

"रश्मि, ये शादी तो बेकार की चीज़ है। मैं तो शादी बिल्कुल नहीं करूंगा। दीदी की शादी रुकवानी पड़ेगी।"

रश्मि: (थोड़ा हैरान होकर)

"क्या? दीदी की शादी क्यों रुकवानी पड़ेगी?"

राहुल:

"क्योंकि शादी करना बिल्कुल जरूरी नहीं है। देखना, दीदी को कितनी परेशानी होगी शादी के बाद।"

(राहुल और रश्मि पंडित जी की ओर बढ़ते हैं।)

सीन 2: मंडप में पंडित जी के पास

(पंडित जी मंत्र पढ़ते हुए शादी की रस्में करवा रहे हैं। दोनों बच्चे उनके पास जाते हैं।)

राहुल:

"पंडित जी, दीदी की शादी मत कराओ।"

(पंडित जी पहले हैरानी से देखते हैं, फिर हल्की हंसी हंसते हैं।)

पंडित जी: (हंसते हुए)

"अरे बेटा, शादी क्यों ना कराएं? शादी तो ज़रूरी है।"

रश्मि:

"शादी क्यों ज़रूरी है, पंडित जी? बिना शादी के कोई जी नहीं सकता क्या?"

पंडित जी: (समझाते हुए)

"बेटा, शादी इसलिए ज़रूरी है ताकि हमारी पीढ़ी आगे बढ़ सके। बिना शादी के जीवन आगे कैसे बढ़ेगा?"

राहुल: (थोड़ा सोचते हुए)

"लेकिन जानवरों की तो शादी नहीं होती। उनके भी तो बच्चे होते हैं और वो तो बिना शादी के भी खुश रहते हैं।"

सीन 3: तर्क और सवाल

(बच्चों के तर्क से पंडित जी और आसपास के लोग गंभीर हो जाते हैं। पास में बैठे परिवार वाले भी ध्यान से सुनने लगते हैं।)

पंडित जी: (हल्की हंसी के साथ)

"बेटा, जानवर और इंसान में बहुत फर्क होता है। जानवरों में हमारे जैसे भावनाएं नहीं होतीं। उन्हें धर्म, नियम-कानून की समझ नहीं होती। वे भगवान को नहीं मानते, न ही इंसानों जैसा प्यार या अपनापन होता है।"

रश्मि: (पंडित जी की बात काटते हुए, अपने पापा की ओर इशारा करते हुए)

"लेकिन पंडित जी, इंसानों में भी कहाँ लगाव है? देखिए न, दीदी की शादी के बाद क्या होगा। जीजा जी दिन भर ऑफिस में रहेंगे, शाम को आएंगे तो TV, फोन, या लैपटॉप पर बीजी रहेंगे। फिर रात में दीदी रोएगी। क्या ये प्रेम है?"

(पास बैठे रिश्तेदार और माता-पिता हैरान होते हैं, और ध्यान से सुनते हैं।)

राहुल: (अपनी मां-पापा की ओर इशारा करते हुए)

"और फिर एक दिन दीदी घर से बाहर नहीं निकलेगी, उसकी आँख सूजी हुई होगी। जीजा जी पूछेंगे, 'तेरे से कौन लड़का बात कर रहा था?' फिर दीदी फोन करेगी अपने घरवालों को और लड़ाई होगी। हर दिन ऐसा ही चलेगा, और एक दिन पुलिस आएगी।"

सीन 4: गहरी चुप्पी और शर्मिंदगी

(राहुल और रश्मि की बातें सुनकर सब लोग चुप हो जाते हैं। मंडप में बैठे सभी लोग सोच में डूब जाते हैं। पंडित जी, जो शुरू में हंस रहे थे, अब गंभीर हो जाते हैं। उनके चेहरे पर आंसू दिखाई देने लगते हैं। बच्चों के माता-पिता और बाकी रिश्तेदार शर्मिंदा हो जाते हैं।)

पंडित जी: (भावुक होकर)

"बच्चों, तुमने जो बातें कही हैं, वो बहुत गहरी हैं। शादी का मतलब सिर्फ रस्में पूरी करना नहीं है। शादी का असली मतलब एक-दूसरे के साथ जीवनभर का साथ, सम्मान और समझदारी है। मगर, जो तुमने कहा, वो भी आजकल के समाज की सच्चाई है।"

राहुल:

"तो पंडित जी, फिर जानवरों में इंसानों से ज्यादा प्यार और अपनापन क्यों होता है? जानवर तब तक अपने बच्चों से अलग नहीं होते, जब तक वो खुद अपनी देखभाल करने के काबिल न हो जाएं। तो फिर हम लोग जानवरों से कम क्यों हो गए?"

(यह सुनकर सभी लोग चुप हो जाते हैं। पंडित जी की आँखों में आँसू आ जाते हैं। मंडप में उपस्थित हर व्यक्ति शर्मिंदा महसूस कर रहा है।)

सीन 5: बच्चों की मासूमियत और सवाल

(इतने में, DJ की आवाज़ गूंजती है। दोनों बच्चे अपनी मासूमियत में नाचने के लिए दौड़ पड़ते हैं, पर उनके द्वारा उठाए गए सवाल सभी के दिलों में घर कर जाते हैं।)

राहुल: (रश्मि से)

"चल, DJ पर नाचते हैं।"

(बच्चे खुशी-खुशी नाचने के लिए चले जाते हैं, लेकिन उनके पीछे मंडप में एक गहरी सोच और कई सवाल छोड़ जाते हैं।)

सीन 6: अंत में फेरों का समापन

(पंडित जी फेरों के लिए तैयार हो जाते हैं। वे शादी के केवल दो फेरे करवाते हैं, बाकी रस्में नहीं। यह प्रतीकात्मक है कि शायद अब शादी के अर्थ को नए सिरे से समझने की जरूरत है।)

पंडित जी: (धीरे से)

"अब इस शादी को संपन्न मानते हैं, लेकिन बच्चों ने जो सवाल उठाए हैं, वे सबके लिए सोचने का विषय हैं।" जीवन में समझ पैदा करने के लिए हमें बुजुर्गों की सलाह के साथ-साथ बच्चों का तजुर्बा भी समझना चाहिए। बच्चों ने दोनों वर बधु को जीवन जीने का पाठ पढ़ा दिया हैं, शास्त्र व मंत्र में इस से बेहतर बाकी कुछ नही। यदि आप सभी इस बात को आज समझ सको तो यह अध्याय यहीं से शुरु कर सकते हो। घरेलू हिंसा में दोनों पक्ष बराबर के ज़िम्मेदार होते हैं। आपसी समझ से परिवार चलाने चाहिए।

(फिल्म का अंत इन गहरे सवालों के साथ होता है। मंडप में उपस्थित लोग सोच में डूबे होते हैं। कहानी घरेलू हिंसा और शादी की वर्तमान स्थिति पर सवाल उठाते हुए दर्शकों के दिलों को छू जाती है।)

अंत क्रेडिट्स के साथ बैकग्राउंड म्यूजिक चलता है।

संदेश:

शादी की परंपराओं और सामाजिक बंधनों के बीच बच्चों द्वारा मासूम सवालों से शुरू की गई यह कहानी एक गहरे सामाजिक संदेश को प्रस्तुत करती है। जिस के लेखक श्री देवेश आदमी जी हैं जो content creator लेखक हैं।

–रखनीखाल (उत्तराखंड), मो. 8433121361

कहानी

ज़िंदगी की सच्ची रेखाएँ

शहाब ख़ान 'सिफ़र'

अर्जुन का कमरा छोटा था, पर उसकी दुनिया बड़ी थी। दीवारों पर चिपके पुराने कार्टून्स में बचपन की यादें ज़िंदा थीं, एक लड़का राकेट उड़ाता, दूसरा ड्रैगन से लड़ता। डेस्क पर पेंसिलों का ढेर, इरेज़र के टुकड़े, और काग़ज़ के स्क्रैप बिखरे पड़े थे। खिड़की के पास लगा पौधा मुरझा रहा है, क्योंकि अर्जुन उसे पानी देना भूल जाता है। खिड़की से सुबह की धूप आ रही थी। कमरे में घड़ी की टिक-टिक, पंखे की घरघराहट, और पेंसिल के काग़ज़ पर खरोंचने की हल्की आवाज़ गूंज रही थी।

अर्जुन अपनी नई कॉमिक स्ट्रिप बनाने में डूबा हुआ था। उसकी आँखों के नीचे काले घेरे थे, जो रात भर जागकर ड्राइंग करने की निशानी। ड्राइंग करते वक़्त उसकी कमर झुकी थीऔर पैर बेतरतीब ढंग से हिल रहे थे। वह एक बिल्ली का चेहरा बना रहा था। पेंसिल हल्के से काग़ज़ को छूती, फिर अचानक रुक जाती। उसकी भौंहें तन गईं। ''ये लाइन..। यहाँ से थोड़ी टेढ़ी हो गई,'' उसने मन ही मन सोचा। इरेज़र ने काग़ज़ को रगड़ा, तो वहाँ एक धब्बा रह गया। उसने काग़ज़ को हल्का सा टेबल पर टैप किया, जैसे कोई जादू कर रहा हो। फिर दोबारा कोशिश की।

अर्जुन को ड्राइंग में ''परफेक्शन'' पाने का ऑब्सेशन है। उसका दिमाग उसे बार-बार यह एहसास दिलाता है कि हर लाइन, हर शेप बिल्कुल सटीक होनी चाहिए। अगर ऐसा नहीं होता, तो उसे लगता है कि कुछ बुरा हो जाएगा, जैसे उसकी कला बेकार समझी जाएगी या लोग उसे नकार देंगे। इस डर से वह एक ही ड्राइंग को बार-बार मिटाता है, पेंसिल को जरूरत से ज्यादा दबाता है, और छोटी-छोटी गलतियों को लेकर घंटों तक परेशान रहता है।

अर्जुन की ज़िंदगी में हर चीज एक नियम के मुताबिक चलती थी। सुबह उठते ही वह अपने डेस्क की पेंसिलों को तीन बार गिनता, फिर उन्हें साइज के हिसाब से सजाता। अगर कोई पेंसिल उलटी पड़ी होती, तो उसे लगता कि आज का दिन खराब जाएगा। यही नहीं, ड्राइंग शुरू करने से पहले वह कुर्सी को ठीक उसी स्पॉट पर रखता, जहाँ कल रखी थी। उसके दिमाग में एक टूटा हुआ रिकॉर्ड बजता रहता: 'गलती मत करना..। सब कुछ परफेक्ट होना चाहिए।'

डॉक्टर इसे ऑब्सेसिव कंपल्शन डिसऑर्डर (OCD) कहते थे। एक ऐसी बीमारी जहाँ इंसान अपने ही विचारों के जाल में फँस जाता है। पर अर्जुन के लिए यह कोई बीमारी नहीं, बल्कि उसकी कला का राज़ था। वह नहीं जानता था कि यही आदतें एक दिन उसे अपने ही खोल में कैद कर देंगी।

OCD एक मानसिक स्वास्थ्य स्थिति है जिसमें व्यक्ति के मन में बार-बार अवांछित विचार या डर (ऑब्सेशन्स) आते हैं, और वह उन्हें दूर करने के लिए कुछ विशेष क्रियाएँ (कम्पल्शन्स) दोहराता है। ये क्रियाएँ उसकी चिंता को थोड़ी देर के लिए शांत करती हैं, लेकिन लंबे समय में यह समस्या को और बढ़ा देती हैं।

तभी दरवाजे पर दस्तक हुई। माँ ने चाय का कप थमाया और बोली, ''बेटा, ये चाय पी लो। सुबह से कुछ खाया नहीं।''

अर्जुन ने बिना सिर उठाए कहा, ''हाँ माँ, बस पाँच मिनट..। ये लाइन परफेक्ट करनी है।''

माँ ने आहिस्ता से कमरे को देखा। टेबल पर धूल जमी थी, और कुर्सी के पाये टेढ़े हो गए थे। ''क्या बनाया है?'' उसने पूछा।

''कुछ ख़ास नहीं,'' अर्जुन ने जल्दी से काग़ज़ को हाथ से ढक लिया।

अर्जुन (खुद से): ''एक बार..। बस एक बार सब कुछ सही बन जाए।''

माँ (चिंतित): ''बेटा, तू अपने आप को मत खोखला कर। ये ड्राइंग तेरे से ज़्यादा कीमती नहीं।''

माँ चली गई, तो उसने फिर पेंसिल उठाई। बिल्ली की मूँछें बनाते हुए उसकी साँसें तेज हो गईं। ''दायीं मूँछ थोड़ी लंबी है..। नहीं, बायीं वाली!'' उसने इरेज़र से फिर रगड़ा। काग़ज़ का कोना मुड़ गया। अर्जुन ने पूरा शीट निकालकर अलग रख दिया और नया काग़ज़ लगाया। इस बार उसने पेंसिल को इतना दबाया कि काग़ज़ पर गड्ढा पड़ गया।

''अर्जुन! चाय ठंडी हो गई!'' माँ ने बाहर से आवाज़ दी। ''आ रहा हूँ!'' उसने जवाब दिया, पर कुर्सी से नहीं हिला। उसकी नज़रें ड्राइंग से चिपकी थीं। खिड़की से आती हवा ने काग़ज़ को हिलाया, तो उसने उसे किताब से दबा दिया। ''हर बार यही होता है..। कुछ भी सही नहीं होता,'' वो मन ही मन बड़बड़ाया।

दोपहर तक उसकी टेबल पर फटे हुए काग़ज़ों का ढेर लग गया। हर ड्राइंग में कोई न कोई कमी नज़र आती—एक आँख बड़ी, दूसरी छोटी,पूँछ टेढ़ी,पंजे धुंधले। उसने आखिरी शीट भी फाड़कर फेंक दी और सिर पकड़कर बैठ गया। ''क्यों नहीं बन पाता ? मैं ही क्यों ? "

बाहर से माँ की आवाज़ आई, "अर्जुन, खाना रख दिया है ! "

"नहीं चाहिए ! " उसने ज़ोर से कहा, और फिर पछताकर मन ही मन माँ से माफी माँगी।

अर्जुन ने नया काग़ज़ निकाला। उसकी उंगलियाँ पेंसिल को इतनी ज़ोर से पकड़ रही थीं कि नाखून सफ़ेद पड़ गए। बिल्ली का चेहरा बनाने के लिए उसने पहले एक गोला खींचा, फिर उसमें दो बिंदुआँखें। ''बायीं आँख थोड़ी नीचे है," उसने सोचा और इरेज़र से मिटाया। दसवीं बार कोशिश के बाद भी आँखें बराबर नहीं बन रही थीं।

टेबल पर रखी घड़ी की टिक-टिक से इस वक़्त उसे परेशानी महसूस हो रही थी। उसने घड़ी को उल्टा कर दिया, मगर आवाज़ रुकी नहीं। बाहर से किसी के हँसने की आवाज़ आई। अर्जुन ने खिड़की बंद कर दी। ''शोर बंद हो जाए, तभी मैं ठीक से बना पाऊँगा," उसने आपने मन में गुस्सै भरे लहजे में कहा।

पेंसिल फिर चली। बिल्ली की नाक बनाने के लिए उसने एक छोटा त्रिकोण खींचा। ''ये तो टेढ़ा है ! " उसने इरेज़र से रगड़ा। काग़ज़ का वो हिस्सा फट गया। अर्जुन ने काग़ज़ को उठाकर उसे सूँघा, उसमें से इरेज़र के रबर की गंध आ रही थी। उसने पूरी शीट हटाकर नई शीट लगाई।

तभी मोबाइल की घंटी बजी। अर्जुन ने टेबल पर रखे फोन पर नज़र डाली, उसके दोस्त राज का नाम स्क्रीन पर नज़र या रहा था, उसने कॉल रिसीव किया।

"यार, तुमने वो कॉमिक स्ट्रिप अभी तक भेजी क्यों नहीं ? एडिटर तुम्हें ढूँढ़ रहा है ! " राज की आवाज़ में चिंता थी।

अर्जुन ने मेज पर बिखरे काग़ज़ों को देखा। "कल तक भेज दूँगा..। कुछ परफेक्ट नहीं बन पा रहा है, बस थोड़ा और टाइम चाहिए,"उसने जल्दी से कहा।

"पर यार, तुम पूरे हफ्ते से यही कह रहे हो,तुम्हारी परफेक्ट ड्राइंग के चक्कर में काम रुका पड़ा है, एडिटर ग़ुस्सा हो रहा है। " राज ने कहा।

राज ने कहा, "कल तक पक्का भेज देना वरना एडिटर हम दोनों की पेमेंट रुकवा देंगे। "

"ठीक है करता हूँ। " कहते हुए अर्जुन ने कॉल डिस्कनेक्ट कर दिया।

अर्जुन ने मोबाइल को टेबल पर तेज़ी से पटका। उसकी साँसें तेज हो गईं। ''सब मुझे दबाव दे रहे हैं..। कोई नहीं समझता," उसने मेज पर मुट्ठी मारी। पेंसिलें उछलकर फर्श पर बिखर गईं। उन्हें उठाते वक़्त उसकी नज़र अपने हाथों पर पड़ी, उंगलियों के पोर लाल थे, पेंसिल के दबाव के निशान थे।

वह वापस बैठा। इस बार उसने सीधी लाइन खींचने के लिए स्केल का इस्तेमाल किया। लाइन सीधी थी, मगर उसे लगा कि स्केल ने काग़ज़ को खरोंच दिया है। उसने काग़ज़ को हल्का सा टटोला, कहीं कोई दरार तो नहीं ? ''नहीं, ये तो ठीक है," उसने खुद को समझाया।

बिल्ली की पूँछ बनाते वक़्त उसकी कलाई में दर्द उठा। पसीने से पेंसिल फिसल गई, और लाइन टेढ़ी हो गई। अर्जुन ने इरेज़र उठाया, मगर हाथ काँप रहे थे। इरेज़र के बार-बार रगड़े जाने से काग़ज़ पीला पड़ गया है।

"बस..। बस एक बार ठीक से," उसने आँखें मूँदकर प्रार्थना की। इरेज़र ने काग़ज़ को छील दिया।

"नहीं ! ये कैसी बेवकूफी है ! " उसने काग़ज़ को मसलकर फेंक दिया। टेबल पर सिर रखकर वह सिसकने लगा। ''क्यों नहीं बन पाता ? मैं ही क्यों ? " उसकी आँखों से आँसू काग़ज़ पर गिरे, जहाँ बिल्ली की अधूरी आँखें उसे ताक रही थीं।

तभी माँ ने दरवाज़ा खोला। "बेटा, तू ठीक तो है न ? "

अर्जुन ने आँसू पोंछे और ज़ोर से बोला, "हाँ माँ मैं ठीक हूँ, बस थोड़ी थकान हो गई है। "

माँ ने फर्श पर बिखरे काग़ज़ों को देखा। "ये सब क्यों फैलाया है ? चल, थोड़ा टहल आ। "

"नहीं ! " अर्जुन ने तीखे स्वर में कहा, "मुझे अकेला छोड़ दो ! "

माँ चुपचाप बाहर निकल गई। अर्जुन ने फिर से पेंसिल उठाई। इस बार उसने बिना सोचे ड्राइंग शुरू की। हाथ अपने आप चल रहे थे, टेढ़ी लाइनें, धब्बे, अधूरे शेप्स। उसकी साँसें धीरे-धीरे सामान्य होने लगीं।

अर्जुन की साँसें तेज थीं। राज से किया वादा उसके दिमाग में गूँज रहा था, "कल तक ड्राइंग हर हाल में भेजना ही है ! " उसने पेंसिल को ज़ोर से पकड़ा और बिल्ली की पूँछ बनाने लगा। हाथ इतना तेज चल रहा था कि पेंसिल का नुकीला हिस्सा काग़ज़ को छीलने लगा।

"एक मिनट..। बस इस पूँछ को परफेक्ट करना है," उसने मन ही मन दोहराया। तभी बिल्ली की आँखों में उसे अपना प्रतिबिंब दिखा—पसीने से तर चेहरा, उलझे बाल। उसने पेंसिल को और

दबाया। अचानक पेंसिल का टिप टूटा और नुकीला लकड़ी का टुकड़ा उसकी हथेली में घुस गया।

"आह ! ये क्या हो गया ? ! "अर्जुन चीखा। खून की बूँदें काग़ज़ पर फैल गईं, लाल रंग ने बिल्ली के चेहरे को डरावना बना दिया। उसने पेंसिल फेंकी और हाथ को मुट्ठी में भींच लिया। दर्द से उसकी आँखों में पानी आ गया। हथेली में चुभन, जैसे कोई कील ठोंक दी गई हो।

माँ दौड़ती हुई आई। "हे भगवान ! ये कैसे हुआ ?"

अर्जुन ने दर्द से कराहते हुए कहा,"माँ, ये मेरी गलती है..। मैंने जल्दबाजी की।"

माँ ने अर्जुन के हाथ को देखा तो चेहरा सफ़ेद पड़ गया। "जल्दी, कपड़े से बाँधते हैं ! "उन्होंने अपनी साड़ी का पल्ला फाड़ा और हाथ को कसकर बाँध दिया।

"माँ, मेरी ड्राइंग..." अर्जुन ने खून से सनी बिल्ली की तरफ इशारा किया।

"अब कोई ड्राइंग नहीं, फिलहाल अपने हाथ की फिक्र करो। अभी डॉक्टर के पास चलते हैं।"

"अरे माँ, मामूली चोट है, ठीक हो जाएगी, डॉक्टर की ज़रूरत नहीं है।" अर्जुन ने हाथ छुड़ाने की कोशिश करते हुए कहा।

माँ ने उसे खींचकर बाहर ले जाने की कोशिश करते हुए कहा, "इतना खून बह रहा है और तुम्हें मामूली चोट लग रही है।"

अर्जुन को माँ ज़िद के आगे झुकना पड़ा। माँ उसे अपने साथ डॉक्टर के पास ले आईं।

क्लिनिक में डॉक्टर ने पट्टी बाँधते हुए कहा, "ये चोट गहरी है। कम से कम 1 हफ़्ता पेंसिल मत पकड़ना।"

"पर मेरा काम..." अर्जुन ने बेचैनी से कहा।

"काम तो बाद में भी हो सकता है लेकिन हाथ खराब हो गया तो ज़िंदगी भर पछताओगे। "डॉक्टर ने सख्ती से कहा।

घर लौटकर अर्जुन ने डेस्क की तरफ देखा। काग़ज़ पर खून का धब्बा सूख चुका था, और बिल्ली की आँखें जैसे उसे घूर रही थीं। उसने अपने हाथ को हिलाया, दर्द की सिहरन महसूस हुई।

"ये 1 हफ़्ता..। मैं बिना ड्रॉइंग किये कैसे गुज़रूँगा ?" उसने खुद से कहा।

रात को उसकी नींद टूट-टूट कर आई। सपने में वह टूटी पेंसिलों के पहाड़ पर चढ़ रहा था, और हर कदम पर काग़ज़ के टुकड़े उसे काट रहे थे।

दिन गुज़र रहे थे। अर्जुन का कमरा अब सन्नाटे से भरा था। डेस्क पर धूल जम गई थी, और पेंसिलें बिखरी पड़ी थीं, मानो उन्हें कोई छूने से डर रहा हो। अर्जुन खिड़की के पास खड़ा बारिश को देख रहा था। उसके हाथ में पट्टी बँधी थी, पर हाथ के दर्द से ज़्यादा तकलीफ़ उसे अपने ज़हन में महसूस हो रही थी। बारिश की नमी और धूल मिलकर एक भारीपन ला रही हैं।

"पाँच दिन..। पाँच दिन हो गए ड्राइंग किए," उसने खिड़की के शीशे पर उंगली से गिनती लिखते हुए खुद से कहा। शीशे पर भाप जमी थी। उसने एक सर्कल बनाया, फिर उसे बार-बार पोंछा। "नहीं, ये गोल नहीं है," उसने हाथ से रगड़ा, मगर शीशे पर धब्बा रह गया।

माँ ने दरवाज़ा खोला। "बेटा, खाना निकाल दिया है। थोड़ा खा लो।"

"नहीं माँ, अभी भूख नहीं है,"अर्जुन ने बिना मुड़े जवाब दिया।

"तुम दिन ब दिन दुर्बल और कमज़ोर होते जा रहे हो।" माँ ने चिंतित आवाज़ में कहा।

"ऐसा कुछ नहीं है माँ, मैं ठीक हूँ।" अर्जुन ने माँ को समझते हुए कहा।

माँ ने हैरानी से उसे देखा और कहा, "ठीक है, जब भूख लगे तो मुझे बता देना।"

अर्जुन ने हां में सिर हिलाया, माँ वापस चली गईं।

वह डेस्क के पास बैठ गया। उसकी उंगलियाँ पेंसिल की तरफ बढ़ीं, पर डॉक्टर की चेतावनी याद आ गई। "नहीं, नहीं छूना है," उसने खुद को समझाया। पर हाथ काँपने लगे। उसने टेबल के किनारे को पकड़ लिया, एक, दो, तीन बार। "काबू करो..। बस काबू करो।" उसने आँखें मूँदकर खुद से दोहराया।

रात को नींद नहीं आई। वह दीवार पर बनी दरारें गिनने लगा। एक, दो, तीन..। दस। "ये दरारें बढ़ गई हैं," उसने सोचा।

सुबह-सुबह उठकर उसने टेप लिया और दरारों को चिपकाने लगा। माँ ने उसे ऐसा करते देखा तो पूछा, "अर्जुन, सुबह-सुबह ये क्या कर रहे हो ?"

"कुछ नहीं..। बस ये दरारें परेशान कर रही थीं," उसने जल्दी से कहा।

"मुँह-हाथ धो लो, मैं नाश्ता बना देती हूँ।" माँ ने कहा।

अर्जुन ने बिना कुछ कहे हाँ में सिर हिलाया और बाथरूम की तरफ़ चला गया।

नाश्ता के बाद उसने कमरे की सफाई शुरू की। कुर्सी को दस बार दाएँ-बाएँ घुमाया, ताकि वह सहीजगह आ जाए। किताबों को रैक पर रखते हुए उनकी साइज के हिसाब से क्रम लगाया। मगर हर चीज़ में कोई न कोई कमी नज़र आती। "ये किताब थोड़ी ऊपर होनी चाहिए..। नहीं, नीचे," वह खुद से बड़बड़ाता रहा।

दोपहर को राज का फोन आया। "यार, तुम ठीक हो न ? एडिटर तुमसे मिलना चाहते हैं।"

“मैं.. । मैं अभी तैयार नहीं । ”अर्जुन ने फोन काट दिया ।

शाम को उससे रहा नहीं गया । उसने पेंसिल उठाई, पर हाथ में चुभन हुई । ”बस एक लाइन.. । बस एक,” उसने पेंसिल को ढीला पकड़ा । काग़ज़ पर एक टेढ़ी लकीर खींची । हाथ काँपा, और पेंसिल छूट गई । उसने मुट्ठी से काग़ज़ को मसल दिया । ”ये नहीं हो सकता.. । मैं ड्राइंग नहीं कर पा रहा हूँ । ”

उसने इधर-उधर देखा । ऐसा लगा जैसे कमरे की हर चीज़ उसे चिढ़ा रही थी, टेढ़ा पंखा, असमान कुर्सियाँ, दीवार पर लटका टेढ़ा कैलेंडर । उसने कैलेंडर को सीधा किया, फिर उतारकर फेंक दिया । साँसें तेज हो गईं । ”सब कुछ गलत है.. । सब कुछ ! ”

माँ ने अंदर आकर पूछा “अर्जुन क्या तुम ड्रॉइंग कर रहे थे ? डॉक्टर ने मना किया था न ? ”

“कुछ नहीं माँ, बस ऐसे ही देख रहा था । ” उसने जवाब दिया ।

रात को उसने सोने की कोशिश की, पर दिमाग में विचारों का तूफान था । ”अगर मैं ड्राइंग नहीं कर सकता, तो मैं हूँ क्या ? मेरी पहचान ही क्या है ? ” उसकी आँखों के सामने वही बिल्ली का चेहरा घूमने लगा, टेढ़ी आँखें, मुड़ी हुई मूँछें ।

तभी उसकी नज़र फटे हुए काग़ज़ के एक टुकड़े पर पड़ी, जिस पर उसने अनजाने में कुछ लकीरें खींची थीं । उसने उसे उठाया । लकीरें बेतरतीब थीं, पर उनमें एक अजीब खूबसूरती थी । ”ये.. । ये तो मेरे दिल की बात कह रही हैं,” उसने पहली बार मुस्कुराते हुए सोचा ।

रात का अँधेरा गहरा हो चुका था । अर्जुन की मेज़ पर टिमटिमाते टेबल लैंप की रोशनी में वह फटा हुआ काग़ज़ का टुकड़ा पड़ा था । उसकी नज़रें उन अराजक लकीरों पर टिकी थीं, जो बिना सोचे-समझे खींची गई थीं । ”ये क्या है ? ये तो बिल्कुल बेकार है...” उसने मन में सोचा, पर फिर रुका । उसने काग़ज़ को घुमाया.. । उल्टा किया.. । फिर से देखा ।

तभी उसके हाथ ने अपने आप पेंसिल उठा ली । दर्द हुआ, पर उसने अनदेखा किया । उसने काग़ज़ के दूसरी तरफ एक धुँधला सा चेहरा बनाना शुरू किया, आँखें बिना पलकों की, नाक टेढ़ी, होंठों पर दरारें । हर स्ट्रोक में उसकी साँसें आज़ाद हो रही थीं । इरेज़र का इस्तेमाल नहीं.. । कोई सुधार नहीं । खिड़की से कमरे में आता ताज़ी हवा का झोंका काग़ज़ों को हिला रहा था ।

सुबह होते ही उसकी मेज पर पाँच नई ड्राइंग्स पड़ी थीं । हर एक में टूटी हुई लाइनें, धब्बे, और अधूरे विचार । अर्जुन ने उन्हें देखा तो पहली बार उसके चेहरे पर सुकून की झलक आई । ”ये मैं हूँ.. । मेरी असली तस्वीर,” उसने मन ही मन कहा ।

दोपहर को दरवाजे पर दस्तक हुई । राज अंदर घुसा तो हैरान रह गया । “अरे, ये क्या बना डाला है तूने ? ”उसने डेस्क पर पड़ी ड्राइंग्स उठाईं ।

“कुछ नहीं.. । बस वक़्त काट रहा था,”अर्जुन ने शर्मिंदगी से कहा ।

“नहीं यार ! ये तो तुम्हारा अब तक का सबसे बेस्ट वर्क है ! इसमें जान है.. । भावना है ! ” राज ने एक ड्राइंग को उठाकर सूरज की रोशनी में देखा ।

राज ने उत्साहित होकर कहा,“यार, ये ड्राइंग्स एडिटर को दिखाते हैं ! वो खुश हो जाएंगे । ”

अर्जुन ने कहा, “पर ये तो अधूरी हैं...”

तभी माँ मुसकुराते हुए कमरे में दाखिल हुईं और ड्रॉइंग देखते हुए कहा, “ये अधूरी नहीं बेटा.. । सच्ची हैं । ”

अर्जुन का दिल धड़कने लगा । ”क्या सच में ? ” उसने पूछा ।

“हाँ ! ये टेढ़ी लाइनें.. । ये धब्बे.. । ये सब मिलाकर एक कहानी कह रहे हैं । ऐसी कला तो मैंने कहीं नहीं देखी ! ” राज ने उत्साहित आवाज़ में कहा ।

उस शाम अर्जुन ने पहली बार बिना डर के ड्राइंग की । उसके हाथ अब पेंसिल को कसकर नहीं, बल्कि हल्के से पकड़ रहे थे । कभी लाइनें टूटतीं, कभी रंग बिखरते, पर वह मुस्कुराता रहा । माँ ने दरवाज़े से झाँका तो देखा, उसका बेटा हँस रहा था ।

“माँ, देखो ! ” अर्जुन ने एक ड्राइंग उठाई, “ये वो बिल्ली है जिसे मैं बनाना चाहता था । ”

माँ ने देखा, टेढ़ी मूँछों वाली बिल्ली, जिसकी आँखों में एक अजीब सी चमक थी । “बहुत सुंदर है बेटा । ”उन्होंने आँखें भरकर कहा ।

रात को अर्जुन ने डायरी में लिखा: ”आज मैंने सीखा, खामियाँ छुपाने की नहीं, गले लगाने की चीज़ हैं । शायद यही असली कला है । ”

अगले दिन राज ने अर्जुन के कमरे का दरवाजा खटखटाया । “यार, कल मैंने तुम्हारी नई ड्राइंग्स देखीं ! ये तो...” वह अधूरा वाक्य छोड़कर कमरे में घुसा । अर्जुन की मेज़ पर बिखरी ड्राइंग्स को उठाते हुए उसकी आँखें चमक उठीं । “ये तो कमाल हैं ! ऐसा कुछ मैंने पहले कभी नहीं देखा । ”

अर्जुन धीमे से मुस्कुराया । “ये सब बस.. । टाइम पास करने के लिए बनाया था । ”

“टाइम पास ? ”राज ने आवाज़ ऊँची कर दी । “यार, तुम जानते हो, ये कला है ! तुम्हें इन्हें प्रदर्शनी में लगाना चाहिए ! ”

अर्जुन का चेहरा उतर गया । “प्रदर्शनी ? ये टेढ़ी-मेढ़ी ड्राइंग्स ? लोग हँसेंगे मुझ पर । ”

राज ने उसके कंधे पर हाथ रखा। "नहीं यार, लोग समझेंगे। आजकल असली कला वही है जो दिल की बात कहती हो। ये तो तुम्हारे दिल की आवाज़ है।"

अर्जुन ने डरते हुए एक ड्राइंग उठाई। "पर ये देखो..। यहाँ लाइन टूट गई है, यहाँ रंग फैला है।"

"और यही तो खूबसूरती है !" राज ने जोश से कहा। "ये बताता है कि कलाकार ने दिल लगाकर बनाया है, बिना डर के।"

तभी माँ चाय लेकर आई। "क्या बात हो रही है ?"

राज ने उत्साहित होकर बताया, "आंटी, अर्जुन की ड्राइंग्स प्रदर्शनी में लगनी चाहिए ! मैं गैलरी वालों से बात करूँगा।"

माँ ने ड्राइंग्स को गौर से देखा। "मेरा बेटा तो सच्चा कलाकार है। मैं भी मानती हूँ ये प्रदर्शनी होनी चाहिए।"

अर्जुन ने घबराकर कहा, "पर मैं तैयार नहीं हूँ..। लोग क्या कहेंगे ?"

राज ने उसकी आँखों में देखा। "तुम हमेशा परफेक्ट बनने की कोशिश करते थे, पर असल ज़िंदगी में परफेक्शन कुछ नहीं होती। ये ड्राइंग्स उसी सच को दिखाती हैं। लोग तुम्हारी कला को ज़रूर समझेंगे और सराहेंगे।"

अगले दिन, राज एक गैलरी के मालिक को अर्जुन से मिलाने लाया। गैलरी मालिक ने ड्राइंग्स देखीं तो हैरान रह गया। "ये तो अनोखी शैली है ! ऐसा कुछ मार्केट में नहीं है। हम इसे 'इम्परफेक्ट ब्यूटी' नाम से प्रदर्शित करेंगे।"

अर्जुन ने डरते हुए कान्ट्रैक्ट साइन किए। उस रात उसकी नींद उड़ी हुई थी। "क्या सच में लोग मेरी कला को समझेंगे ? या मैं मज़ाक बन जाऊँगा ?" उसने डायरी में लिखा।

अगले दिन सुबह-सुबह राज उसके लिए एक पैकेट लेकर आया। "ये देखो, ये तुम्हारे लिए !"पैकेट में नई पेंसिल्स और स्केचबुक थीं। "ये तोहफा नहीं, विश्वास है।"राज ने कहा।

अर्जुन मुसकुराते हुए राज का तोहफ़ा कुबूल किया।

राज ने कहा, "वो पेंसिल याद करो जो तुम्हारे हाथ में घुस गई थी ? अब ये नई पेंसिल्स तुम्हारी कला को नई उड़ान देंगी !"

अर्जुन ने पहली बार महसूस किया कि उसके अधूरेपन में भी कोई उस पर भरोसा करता है।

दो दिन बाद गैलरी के बाहर लोगों की कतार लगी थी। अर्जुन की 'इम्परफेक्ट ब्यूटी' की प्रदर्शनी का बोर्ड लटका हुआ था, जिस पर टेढ़े-मेढ़े अक्षरों में लिखा था, 'ज़िंदगी की सच्ची रेखाएँ।' अंदर, दीवारों पर उसकी वो ड्राइंग्स लगी थीं जिन्हें वह कभी बेकार समझता था, टूटी लाइनें, धब्बे, अधूरे चेहरे।

एक बच्चा अपनी माँ के साथ एक पेंटिंग के सामने खड़ा था। "ये लाइनें टेढ़ी क्यों हैं ?"उसने मासूमियत से पूछा।

अर्जुन मुस्कुराया। "क्योंकि हम सब के दिल में कुछ टेढ़ाइयाँ होती हैं, ये उन्हीं की कहानी है।"

बच्चे ने मुसकुराते हुए कहा, "अंकल, ये ड्राइंग तो मेरी तरह है..। मैं भी टेढ़ा लिखता हूँ !"

राज ने अर्जुन के कंधे पर हाथ रखा। "यार, तुमने मुझे गलत साबित कर दिया। मैं सोचता था तू पागल हो गया है !"

"शुक्रिया..। तेरे बिना ये नहीं होता,"अर्जुन ने कहा। उसकी नज़र उस पहली ड्राइंग पर गई, जहाँ खून का धब्बा अब भी बिल्ली के चेहरे पर था। "ये मेरी लड़ाई का निशान है," उसने मन में सोचा।

माँ ने आगे बढ़कर उसे गले लगाया। "मैंने कभी नहीं सोचा था कि मेरा बेटा इतना बड़ा कलाकार बनेगा।"

"तुम्हारी दुआओं का असर है, माँ,"अर्जुन ने कहा।

तभी एक पत्रकार ने माइक थमाया। "आपकी कला का संदेश क्या है ?"

अर्जुन ने गहरी साँस ली। "संदेश यही है कि..। खामियाँ हमें खास बनाती हैं। मैंने सालों तक परफेक्ट बनने की कोशिश की, पर असली सुकून तो अधूरेपन में मिला।"

पत्रकार ने अगला सवाल किया, "क्या आपको लगता है कला से मानसिक बीमारी ठीक हो सकती है ?"

अर्जुन ने जवाब दिया, "बिल्कुल कला के ज़रिए मानसिक बीमारियों को ठीक करने में काफी मदद मिल सकती है।"

लोगों ने तालियाँ बजाई। अर्जुन की नज़र उस टूटी पेंसिल पर पड़ी, जो एक डिस्प्ले केस में रखी थी। "ये मेरी गलतियों की निशानी नहीं..। मेरी जीत का प्रतीक है," उसने मन ही मन कहा।

"उस दिन अर्जुन ने जाना, ज़िंदगी की सबसे खूबसूरत रेखाएँ वही होती हैं, जो हमें अपूर्ण होने का हौसला देती हैं।"

शाम को जब सब चले गए, तो अर्जुन ने डेस्क पर बैठकर एक नई ड्राइंग शुरू की। इस बार बिना इरेज़र के। उसके हाथ अब आजाद थे..। टेढ़ी लाइनें खींचने के लिए।

अर्जुन ने एक आर्ट वर्कशॉप शुरू की, जहाँ वह बच्चों को सिखाता है, "गलतियाँ डराने के लिए नहीं, गले लगाने के लिए होती हैं।" अब वह टूटी पेंसिल को अपने पास रखता है, एक यादगार की तरह।

लेखक :शहाब ख़ान 'सिफ़र'

भोपाल, मध्यप्रदेश, संपर्क : 9340461225

ईमेल :contact@authorshahabkhan.com

वेबसाइट : www। authorshahabkhan.com

कहानी

ठप्पा

केदारनाथ सविता

उत्तर प्रदेश के एक जिले के समोगरा ग्राम में ग्राम प्रधान का चुनाव होने के लिए राज्य सरकार की ओर से घोषणा कर दी गई। इस गांव सभा में पिछले तीन बार से सवर्ण पुरूष उम्मीदवार जीतते आये थे। इस बार अनुसूचित जाति, पुरूष के लिए आरक्षण सीट घोषित किया गया था।

यह समाचार सुनकर जहां सवर्ण परिवारों में मायूसी छा गई, वहीं अनुसूचित जाति के लोगों में खुशी की लहर दौड़ने लगी।

गाँव के एक किनारे पर हरिजन बस्ती में सूरज व राजेंद्र दो भाई रहते थे। दोनों मिडिल पास थे। क्योंकि आगे की पढ़ाई के लिए गाँव में स्कूल नहीं था। दोनों के पिता नहीं थे। घर का खर्च चलाने के लिए ईंटों के भट्ठे पर मजदूरी करते थे। गांव में भी दूसरों के खेतों में फसल बोआई, कटाई आदि का काम करते थे। उनके अपने खेत भी थे। पर उनसे केवल परिवार के खाने भर को अनाज पैदा होता था। रात में खाना खाते समय बड़े भाई राजेंद्र ने सबसे कहा-"मैं सोच रहा हूँ कि इस बार ग्राम प्रधानी के लिए मैं अपना नाम भर दूँ। यदि मैं जीत गया तो पांच साल में हमारे परिवार की हालत सुधर जाएगी। इसमें बहुत मुनाफा है।"

छोटा भाई सूरज बोला -"हाँ भाई, गांव के मिश्रा जी को नहीं देखते हो ? उनके पास कुछ नहीं था, पर पांच साल में कई खेत व एक ट्रैक्टर खरीद लिया। अपने लिये नई कार खरीदा है। उनके लड़के शहर के महंगे स्कूलों में पढ़ते हैं।"

राजेंद्र ने हाँ में सिर हिलाते हुए कहा-"मैं भी एक ट्रैक्टर खरीदने की सोच रहा हूँ। हम लोगों को पूरी हरिजन बस्ती वोट दे दे और चौथाई हिस्सा सवर्ण भी दे दें तो हमारी जीत पक्की है।"

सूरज ने खाने का अंतिम निवाला मुंह में डालते हुए कहा- "लेकिन भाई मैं सोच रहा हूँ कि चुनाव के लिए टिकट आप नहीं मुझे लेने दें। मैं गांव का प्रधान बनना चाहता हूँ। प्रधान बन कर मुझे गाँव के कुछ लोगों से पुराना हिसाब भी चुकता करना है। शम्भू पंडित ने मुझे एक बार अपने हैंड पम्प से पानी लेने से मना कर दिया था। हमारी जाति सूचक गन्दी गाली देते हुए मेरी बाल्टी उठाकर फेंक दिया था।"

राजेन्द्र बोला-'उस बात को भूल जाओ। ग्राम प्रधान बनकर गांव की उन्नति व सेवा की बात सोचनी चाहिए। न कि बदले की भावना रखनी चाहिए। जब तुम बहुत छोटे थे। हमारे पास झोपड़ी के अलावा एक धुर भी खेत नहीं था। एक बार हमारे पिता का पेट खराब हो गया। दोपहर में उन्हें शौच जाना पड़ा। परमा पाड़े के खेत में शौच करके उठने ही वाले थे कि कहीं से आते हुए परमा ने देख लिया। पिता को गन्दी-गन्दी गालियां देते हुए उन्हें अपनी टट्टी तुरंत खेत से उठाकर अन्यत्र फेंकने को कहा। परमा पाड़े के रोबीले मूंछ व कसरती गोरे बदन को देखकर पिता डर गए। उन्होंने एक पत्ते पर अपनी टट्टी उठा कर उनके खेत से दूर अन्यत्र ले जा कर फेंका। तब उनकी जान बची। पर अब न हमारे पिता रहे न वह परमा पाड़े ही जिंदा है।"

सूरज ने फिर कहा-"लेकिन भैया, चुनाव मैं ही लड़ूंगा। आप बड़े हैं,पिता समान हैं। आप सीधे व सरल स्वभाव के हैं। आपके बस की यह राजनीति, चुनाव, पंचायत, गाँव से शहर,जिला तक का दांव -पेंच,अधिकारियों से सांठगांठ आपके बस का नहीं है। आप मुझे ही चुनाव लड़ने दें।"

राजेन्द्र का मन नहीं मान रहा था, पर उन्होंने दबे मन से सूरज को चुनाव लड़ने की अनुमति दे दिया। लेकिन सूरज के प्रति राजेन्द के ह्रदय में एक मन मुटाव घर कर गया।

दूसरे दिन से सूरज गाँव के लोगों में अपना चुनाव-प्रचार करने लगा। राजेंद्र को यह अच्छा नहीं लग रहा था। क्योंकि अभी न नामांकन हुआ, न पर्चा भरा गया, न वह उम्मीदवार बना था। बस गाँव-गुरबा के लोगों में अपना प्रचार करके डींगें हांकने लगा था।

धीरे-धीरे दोनों भाई एक-दूसरे के सामने आने से बचने लगे। दोनों में बोलचाल बंद हो गया।

तभी एक दिन पता लगा कि इस ग्राम सभा के उम्मीदवारी को लेकर गाँव के ही कुछ सवर्ण लोग व भूतपूर्व प्रधान न्यायालय में दावा कर दिए हैं कि ग्राम प्रधान अनुसूचित जाति का नहीं सामान्य जाति का पुरुष होना चाहिए। न्यायालय ने भी पाया कि शासन की गलती से इस ग्राम सभा में सामान्य के स्थान पर अनुसूचित जाति का प्रधान चुनने के लिए घोषणा कर दिया गया है। अब न्यायालय के आदेश पर उसे सुधार कर सामान्य जाति के पुरुष उम्मीदवार को ग्राम प्रधान बनाये जाने की घोषणा कर दी गयी। साथ ही पर्चा भरने की तारीख, पर्चा वापसी की तारीख आदि भी निश्चित कर दी गयी।

अब सूरज बहुत दुखी हुआ। वह अब तक कई हजार रुपये उधार लेकर गांव वालों पर खर्च कर चुका था। प्रधान बनने के बाद सब किस तरह कमाया जायेगा, उसकी रूपरेखा बना चुका था। सपने देख चुका था। लेकिन सब व्यर्थ हो गया।

इस चुनाव के माहौल से सूरज को कुछ मिला तो नहीं पर उसकी अपने बड़े भाई से हमेशा के लिए बोलचाल बंद हो गयी। उसपर स्वार्थी होने का ठप्पा लग गया।

– लालडिग्गी, सिंह गढ़ की गली,

मिर्ज़ापुर-231001 (उत्तर प्रदेश), मो. 9935685068

कहानी

बेस्ट फ्रेंड

रमेश कुमार 'रिपु'

लड़कियाँ मुहब्बत कर लेती हैं,लेकिन शादी के मामले में जल्दीबाजी नहीं करतीं। क्यों कि सवाल राइट परसन का है। रूपाली को भी करियर और लाइफ पाटर्नर में किसी एक को चुनना है। वो तय नहीं कर पा रही है कि वो किसे चुने।

''क्या जीवन में ऐसा भी हो सकता है कि करियर को अहमियत देने पर एक समय बाद लाइफ पाटर्नर के लिए विकल्प ही न रह जाए?''

यह सवाल रूपाली के मन में आते ही वो चलते-चलते एक पल के लिए रुक कर यही सोचने लगती है। पीछे से आ रही माया उसे रोकते हुए और टोकते हुए पूछा,'' अचानक चलते-चलते रुक क्यों गयी? क्या सोचने लगी?''

एक लम्बी सांस खींचते हुए रूपाली ने माया के सामने अपनी समस्या रख दी। तब माया ने उसके गाल पर हल्की सी चपत लगाते हुए बोली,'' ज़िन्दगी में कई बार ऐसा मोड़ आता है,जब लाइफ़ पाटर्नर और करियर में से किसी एक को चुनना होता है। ऐसे समय में समझदार लड़कियाँ आँखें मूंदकर तब लाइफ़ पाटर्नर को चुनती हैं,जब उन्हें यक़ीन हो जाता है कि इससे बेहतर जीवन साथी मिलना मुश्किल है। करियर का क्या? वो तो जब चाहो,तब उसे चुन सकते हो।

रूपाली ने भी यही किया। उसने करियर की जगह देवेश को चुना। इसी को कहते हैं..'इश्क़ जो न कराए'। रूपाली ने देवेश से शादी करने की इच्छा अपनी माँ अराधना के सामने ज़ाहिर की।

शादी की बात सुनकर अराधना हैरान होते हुए बोली,''क्या तुम्हें ऐसा नहीं लगता, कि अपने करियर को किक मार रही हो..? आज एक बड़े मीडिया हाउस में जिस ओहदे पर हो, वहाँ तक पहुंचने में लोगों को बरसों लग जाते हैं। देवेश के प्यार में अपने करियर को किक मारने की इतनी जल्दी क्यों है तुम्हें..? हो सकता है कि तुम्हारा यह डिसीजिन कल के लिए बेहतर न हो..? क्यों कि,तुम अपनी ज़िन्दगी के लिए राइट परसन चुन रही हो। ज़िन्दगी में इश्क़ की पगडंडी पर चलने से बहुत कुछ दांव पर लग जाता है। सोच लो,तुम्हारा क्या दांव पर लगने वाला है..?''

''बात ये है, कि देवेश एक विदेशी कंपनी में मैनेज़र है। वो सेटल है। जिस शिद्दत से मुझे प्यार करता है,ज़रूरी नहीं है,कि मेरी अरैंज मैरिज़ पर मुझे देवेश से अच्छा लड़का मिले। मैं देवेश को जानती हूँ। पहचानती हूँ। उससे प्यार करती हूँ। हाँ,आपकी इस बात से सहमत हूँ कि, अपने करियर को किक मार रही हूँ। मेरे पास अनुभव है। योग्यता है। कभी ज़रूरत पड़ी तो सर्विस मिल जाएगी। लेकिन,देवेश मुझे मिलेगा, इसकी गारंटी नहीं है। ''

"ठीक है। अभी तुम्हें देवेश और उसका प्यार दिख रहा है। तुम्हारी हाथों की लकीरों में तुम्हें देवेश का साथ दिखता है। क्या तुझे कभी आकाश की आँखों में प्यार नहीं दिखा...? जो बचपन से अब तक तेरे साथ रहा। छोटी- छोटी बातों पर तेरे रूठ जाने पर, तुझसे सॉरी कहता था। तेरे पास क़िताब नहीं थी। उसने अपनी क़िताब तुझे दे दी, और खुद बग़ैर किताब के परीक्षा दिया। उसकी सदा कोशिश रही कि, तुम प्रथम आओ। वो सदैव तुम्हारी मदद के लिए हाथ आगे किए रहता था। याद करो..कितनी बार बीमार पड़ी..। तुम्हें अस्पताल कौन ले गया..? चिलचिलाती धूप में तुम्हारे लिए आइस्क्रीम लाने दुकान कौन जाता था..? कोई किसी के लिए, इतनी दौड़ भाग क्यों करेगा..?''

"मम्मी, मैं देवेश की बात कर रही हूँ। आकाश को बीच में लाने की क्या ज़रूरत..?'' थोड़ा ज़ोर देकर रूपाली ने पूछा।

"चाहत भी कोई चीज़ होती है। कोई जुबां से न बोले,इसका मतलब यह नहीं कि उसके दिल में मुहब्बत नहीं है। रही बात मैनेज़र की। आकाश भी मैनेज़र है, शहर के बड़े होटल में। आखिर देवेश और आकाश में फ़र्क क्या है..? वो तुझे दिल से चाहता है। मैं ने आकाश की आँखों में तेरे लिए प्यार उमड़ते कई बार देखी हूँ। डरता है तेरी डाट से। शायद, इसलिए अपने प्यार का इज़हार नहीं किया। वैसे भी तुम उसे अपने बराबर खड़ा कहाँ होने देती है..! इसलिए, उसकी आँखों में..उसके दिल में..और उसकी चाहत में प्यार नहीं देखा। लेकिन...मैं जानती हूँ। आकाश दिल से तुम्हें बेहद चाहता है। शायद देवेश को मैं नहीं जानती, इसलिए मैं आकाश का पक्ष ले रही हूँ। अपनी ज़िन्दगी का बड़ा फ़ैसला लेने से पहले,मेरी बातों पर गौर करके देखना। हमें कोई एतराज़ नहीं है। तुम जहां कहोगी..तुम्हारी पसंद के लड़के से शादी कर देंगे।"रूपाली को समझाते हुए अराधना ने कहा।

"माँ, आकाश मेरा केवल दोस्त है। दोस्त,राइट परसन नहीं होते। बेस्ट फ्रेंड,सदा बेस्ट ही रहते हैं। शादी के पहले भी और शादी के बाद भी। चूँकि, आकाश को उस नज़र से कभी देखी नहीं। इसलिए उसके प्रति मेरे दिल में लव वाली फीलिंग भी नहीं है। ऐसे में उसके बारे में कुछ सोच भी नहीं सकती।" बड़ी मासूमियत से रूपाली ने कहा।

"बेस्ट फ्रेंड यदि राइट परसन बनें, तो ज़िन्दगी में कभी कोई शिकायत नहीं होती। कभी यह कहने का मौका नहीं मिलता बीवी को कि, मैं ने तुमसे शादी करके बड़ी गलती की। मुझे देख। तेरे पापा मेरे बेस्ट फ्रेंड थे। आज भी हैं। कभी उन्हें मुझ पर झल्लाते हुए देखी..? नहीं ना..। बल्कि, मैं ही उन पर हावी रहती हूँ। लेकिन, वो कुछ बोलते नहीं। क्यों कि, वो जानते हैं। उनकी बेस्ट फ्रेंड को कौन सी बात बुरी लग सकती है।"

"कई बार हमारी आँखों को भी ख़बर नहीं हो पाती है कि, बहुतों का प्यार पानी में झलकता महल सा होता है। जिसकी बाहों में झूम जाने और चांदनी रात के फूलों को जूड़े में सजा देने का ख़्वाब दिखाने वाले ऐसे हमसफ़र जब भ्रम तोड़ते हैं...तब लगता है पहली नज़र का प्यार सिर्फ धोखा है।"सलाह देते हुए अनुराधा बोली।

रूपाली ने अपनी माँ के गले लगकर बोली,"मेरी पहली और आख़िरी पसंद, सिर्फ देवेश है।"

अनुराधा ने भी महसूस किया कि, रूपाली अपने दिल के मकान में देवेश के आलावा किसी दूसरे की कल्पना नहीं कर सकती। रूपाली की शादी देवेश के संग कर दी।

ज़िन्दगी में कभी-कभी इश्क़ पहले होता है,और झंझटें बाद में आती है। क्यों कि,हर प्यार अंत तक,पहली मुहब्बत के गुलाब सा नहीं होता। रूपाली की नज़र में देवेश का प्यार,इबादत से कम नहीं था। लेकिन..उसका यह भ्रम टूटा गया। जब उसकी ज़िन्दगी में अचानक एक ऐसी शाम आयी,जिसकी सुबह हुई ही नहीं। जिन आँखों ने पहली बार रूपाली को देखकर चांद कहा था। उसके ख़्यालों में खो जाने की चाह हुई थी। वो आज बेवफ़ाई कर रहा है। देवेश और रूपाली के बीच बह रही प्यार की नदी एक मेडिकल की रिपोर्ट से सूख गयी। रिपोर्ट ने देवेश को सकते में डाल दिया।

रूपाली की मेडिकल रिपोर्ट देखकर देवेश की आँखें फटी की फटी रह गयी। वो हैरान हो गया। सोच में पड़ गया। सिर्फ 28 साल की उम्र में रूपाली को ब्रेस्ट कैंसर...! ये भी कोई उम्र है ब्रेस्ट कैंसर की..! हमारी शादी को हुए,अभी एक बरस ही तो हुए हैं। और ये मुसीबत..! कैंसर के मरीज़ों का ख़्याल आते ही उसके पाँव तले की जमीन खिसक गई। एक महीने तक उसने रूपाली को बताया नहीं, कि उसे ब्रेस्ट कैंसर है। अलबत्ता एक महीने में वो ऐसा बदला कि, उसे देखने वाले देखकर कह ही नहीं सकते कि, यह वही देवेश है, जो रूपाली की तारीफ़ करते थकता नहीं था। उसके प्यार के सिवा, उसे कुछ दिखता नहीं था। अब बात- बात पर.. रूपाली पर गुस्सा करने लगा है। छोटी-छोटी बातों पर उसे आँखें दिखाने लगा है। चाय देने में एक मिनट की भी देरी हो जाने पर, उसका हाथ उस पर उठ जाया करता था।

देवेश में आये इस बदलाव से रूपाली हैरान थी। मुझ पर जान लुटाने वाला। मुहब्बत की कसमें खाने वाला। और कैंडल

डिनर के लिए आए दिन दबाव डालने वाला शख़्स,अचानक बदल कैसे गया..? उसमें तमाम अच्छाइयाँ कूट-कूट कर भरी थी। कहाँ चली गयी..? उसमें इतनी नफ़रत कहाँ से आ गयी..? बेवफ़ाई जान बूझकर कर रहा है या वाकई में बेवफ़ा हो गया है..? जिस मुहब्बत के सावन में वो भीगती थी। अब वो क्यों नहीं दिखता..? मेरी रात के तकिये आँसुओं में भीगते हैं,क्या उसे नहीं दिखता..? उसकी आँखों में मेरे प्रति जो भाव थे,अब क्यों नहीं दिखते..? देवेश के बदलने की वजह क्या हो सकती है..? ऐसे तमाम सवालों के जवाब रूपाली अपने आप से पूछती।

एक दिन रूपाली स्टेपलर ढूंढ रही थी। उसने देवेश के टेबल की ड्राज खोली। उसमें उसे एक फाइल दिखी। फाइल को पलट कर देखते ही उसके चेहरे की रंगत बदल गयी। उसकी मेडिकल रिपोर्ट थी। जिसमें लिखा था, उसे ब्रेस्ट कैंसर है। रिपोर्ट में दिये गये नम्बर पर डॉक्टर को कॉल की।

उधर से आवाज़ आयी,''आपको ब्रेस्ट कैंसर है। फस्ट स्टेज पर है।" रिपोर्ट सुनकर रूपाली घबरा गयी।

"मुझे कैंसर है...! रिपोर्ट आए एक महीने हो गए हैं। लेकिन देवेश ने मुझसे यह बात अभी तक छुपाई क्यों..? बताया क्यों नहीं..? आखिर, क्या चल रहा है देवेश के मन में...! कहीं वो इस रिपोर्ट से टूट तो नहीं गया..? वो मेरे बारे में सोच-सोच के अंदर से हिम्मत तो नहीं खो दिया..? इसीलिए मुझ पर झल्ला उठता है..?''

कैंसर होने की रिपोर्ट पर रूपाली के मन में कई सवाल घुमड़ने लगे। अब क्या होगा..? उसने जो सपने देखे थे देवेश के साथ, वो कैसे मुकम्मल होंगे..? क्या वो अब माँ नहीं बन पाएगी..? माँ का ख़्याल आते ही रूपाली सिहर उठी। देवेश क्या करेंगे..? मैं यदि नहीं बची तो...! मेरे बग़ैर देवेश कैसे रहेंगे..? देवेश उसके बग़ैर अधूरा हो जाएगा। पागल हो जाएगा। उसकी दुनिया उजड़ जाएगी। शादी के एक बरस में ही, इतना सब कुछ हो जाएगा। मुझे देवेश को धीरज बंधाना होगा।

"आदमी बहुत जल्दी टूट जाते हैं। मेरी इस बीमारी की वजह से ही देवेश चिढ़चिढ़ा हो गया है। आँखों में सन्नाटा पसर गया। देवेश के आने पर उससे मुझे बात करनी होगी। उसे साँत्वना देनी होगी कि, मुझे कुछ भी नहीं होगा। ब्रेस्ट कैंसर ही हुआ है। पहला स्टेज है। बहुतों को कैंसर होता है। अब ब्रेस्ट कैंसर लाइलाज़ नहीं है। हाँ..ज़िन्दगी में इसकी कल्पना हम दोनों ने कभी नहीं की थी। खासकर, इस उम्र में बिलकुल नहीं..! ब्रेस्ट कैंसर के बाद ज़िन्दगी खत्म नहीं हो जाती है। यह मर्ज़ पूरे परिवार को डरा जरूर देता है। मगर मुझे देखिए...मैं बिलकुल डरी नहीं हूँ। तुम मेरे साथ हो तो.. फिर मुझे कैसा डर...!"

अपने आप से कई बातें रूपाली ने कर लीं। अगले पल ही उसने अपने आप को संभालते हुए खुद से बोली,''जैसा सोच रही हूँ,वैसा कहीं से नहीं लगता कि देवेश हताश है। क्यों कि, मरीज मैं हूँ। देवेश को मुझ पर दया दिखानी चाहिए। प्यार आना चाहिए। मुझे अधिक से अधिक, खुश रखना चाहिए। लेकिन, उनका व्यवहार इसके ठीक उल्टा है..? एक बार भी उन्होंने हमदर्दी नहीं दिखाई। हमदर्दी के दो शब्द भी नहीं बोले..? क्या पत्नी को कैंसर होने से पति बदल जाते हैं? उनकी मुहब्बत कम हो जाती है..? ऐसी नादानी की उम्मीद देवेश से नहीं की जा सकती। उनके मन में आखिर चल क्या रहा है,यह जानना ही पड़ेगा। क्यों कि, सवाल मेरी ज़िन्दगी और ख़्वाबों का है।"

रात को खाने की टेबल पर अचानक देवेश चीख पड़ा रूपाली पर। "सब्जी में इतनी मिर्ची कोई डालता है..। तुम चाहती क्या हो..? कभी दाल में नमक ज़्यादा और कभी नमक ही नहीं। रोटी ऐसा बनाती हो कि तोड़े नहीं टूटती। आखिर, तुम्हें हो क्या गया है..? कोई ऐसा खाना बनाता है..? ऐसा लगता है,तुमने तय कर लिया है कि, मैं तुम्हारे हाथ का खाना अब न खाऊँ..? यदि ऐसा है तो, मेरे साथ मत रहो। तुम्हें अब,और बर्दाश्त नहीं कर सकता। अपनी माँ के पास चली जाओ। ताकि.. चैन से रह सकूं.।" गुस्से में झल्लाकर देवेश ने कहा।

सब्जी को चखते हुए रूपाली ने कहा,''इसमें तो मिर्ची डाली ही नहीं है। तुम्हें अब और बर्दाश्त नहीं कर सकता। क्या मतलब देवेश.?'' रूपाली ने धीरे से कहा।

"नहीं है मिर्ची, तो तुम ही खा लो। मुझे ऐसी सब्जी नहीं खानी है, बस..।" चीख कर देवेश ने कहा।

"ठीक है। मत खाइये। जो खाना है खा लो। मै बड़े जतन से तुम्हारी पसंद की आलू, गोभी, मटर की सब्जी बनाई है। वह भी पसंद नहीं है। कल ही बोले थे ना। सब्जी में मिर्ची नहीं डालना। भूल भी गए। कोई बात नहीं।"

कुछ देर ठहर कर रूपाली बोली,'' मेरी मेडिकल रिपोर्ट पिछले एक माह से ला कर रखे हैं। बताए क्यों नहीं, कि मुझे ब्रेस्ट कैंसर है..?''

"भूल गया बताना, कि ब्रेस्ट कैंसर है। वैसे भी यह कोई बताने की चीज़ है..? नहीं बताया,तो क्या हो गया..? रिपोर्ट तो देख ही ली हो।"बड़ी लापरवाही से देवेश ने कहा।

“एक महीने बाद देखी। इस बीच हम किसी अच्छे डॉक्टर से मिल सकते थे। कैंसर है। कोई छोटी- मोटी बीमारी नहीं। मुझे यह उम्मीद नहीं थी, कि ऐसी लापरवाही करेंगे..!”

“उम्मीद तो मुझे भी नहीं थी, कि तुम्हें कैंसर हो जाएगा..?'' देवेश पलट कर तेज आवाज़ में कहा।

“तो,अब क्या करोगे.?'' धीरे से रूपाली बोली।

उसे जो जवाब देवेश से मिला वो कैंसर से भी बड़ा भयावह था।

“मैने तुमसे प्यार किया। शादी की। खुशी-खुशी, ज़िन्दगी जीने के लिए। इसलिए नहीं कि, एक बीमार ज़िन्दगी को ढोऊँ। मुझसे कोई उम्मीद भी नहीं रखना..। सर्दी,खांसी,बुखार और मलेरिया जैसी बीमारी नहीं है कैंसर..! यह मौत से भी बद्तर बीमारी है। मैं ही नहीं...कोई भी इस बीमारी की शिकार बीवी से कैसे रिश्ता रखेगा..? कैंसर के इलाज़ के बाद,तुम डिफेक्टिव सामान की तरह हो जाओगी। सारी उम्र कैंसर हास्पीटल भागना पड़ेगा। कैंसर मरीज़ एक धड़कती लाश से ज़्यादा कुछ नहीं है। बीवी होकर भी तुम्हारा होना.. न होना, कोई मायने नहीं रहेगा। तुम माँ भी बन सकोगी...इसकी कोई गारंटी नहीं..! बाई चांस माँ बन जाने पर हमेशा डर बना रहेगा, कि होने वाली संतान कहीं कैंसर की मरीज़ न हो..।”

“और कुछ कहने को बाकी हो तो कह लो। पता नहीं फिर कहने को न मिले।” सुबुकते हुए रूपाली बोली।

“हाँ, सच यही है। मेरी बातें कड़वी है,लेकिन गलत नहीं कह रहा हूँ। और एक बात सुन लो, मैं तुम्हारे कैसर इलाज़ के लिए अपना समय और पैसा ज़ाया नहीं कर सकता। मुझे कैंसर वाली बीवी का पति कहलाना पसंद नहीं है। मैं तुम्हें नहीं ढो सकता। मैं अपना करियर देखूं या तुम्हारी बीमारी...! जानती हो.. बड़ी मुश्किल से विदेशी फ़र्म में नौकरी मिलती है। इस बीमारी के इलाज़ में कई माह लग जाते हैं। इतनी लंबी छुट्टी ली, तो नौकरी चली जाएगी। इस बीमारी का भरोसा नहीं कि कितने रुपए लगेंगे। वैसे भी, तुम्हारे पापा ने दहेज में कुछ खास दिये नहीं थे। इसलिए तुम अपने पापा से कह सकती हो कि...।

“बीच में ही टोकते हुए रूपाली ने गुस्से से कहा,''क्यों,सात लाख रूपये कम थे? बहुत पानीदार हो, तो लौटा दो..।”

“सात लाख रुपए दिये थे, वो सब खर्च भी तो हो गए। कौन सा मेरे घर वालों ने बचा कर बैंक में डाल दिया। देखो, मैं कोई बहस नहीं करना चाहता। सीधी सी बात। मैं कैंसर वाली औरत के साथ नहीं रह सकता। मेरे पास तुम्हारे इलाज़ के लिए ना समय है और न ही पैसा..।” रूखे भाव सें देवेश ने कहा।

रूपाली को लगा जैसे उसके पैर तले की ज़मीन खिसक गई। सिर से आसमान गायब हो गया। जिसके लिए अपनी माँ की बातों को इज्ज़त नहीं दी। नज़र अंदाज़ की। उसने आज मुझे न केवल नज़र अंदाज़ कर दिया बल्कि..दिल से भी निकाल दिया। सावन में एक साथ भीगने की तमन्ना रखने वाला महबूब, कैंसर होने पर एक पल में. सात फेरे की गाँठ खोल दे। क्या ऐसा भी कोई महबूब होता है..? नफ़रत करे। गुस्सा करे। हम सफ़र साथ-साथ चलते हैं। ये कैसा हमसफ़र है..? जो साथी को तकलीफ में देखकर रास्ता बदल ले। क्या,ऐसे ही लोग बेवफ़ा कहे जाते हैं..?''

अपने आँसू पोंछ कर रूपाली ने कड़क आवाज़ में कहा,''मुझे कैंसर हुआ है,तो क्या हुआ। अभी ज़िन्दगी खत्म नहीं हुई है। मैं अपने आप से लड़ूँगी। कोई मेरा साथ दे.. या न दे..।”

रूपाली को अपनी माँ के पास आए कई दिन हो गए थे। इस बीच अराधना ने महसूस किया,कि रूपाली कुछ बदली-बदली सी है। उन्हें कुछ आशंका हुई।

रूपाली से पूछा,‘सब ठीक है ना.? देवेश से तेरा झगड़ा हुआ है क्या...? कुछ बोलती क्यों नहीं..?''

रूपाली ने जवाब नहीं दिया।

एक दिन अराधना ने गौर किया, कि रूपाली कमरे में चुप-चाप रो रही है। उन्होंने आकाश को फोन कर बताया,‘‘रूपाली को आए दस दिन हो गए हैं। लेकिन, अपने कमरे में चुपचाप रोती रहती है। उससे बात करके पता कर, रो क्यों रही है.?''

आकाश ने रूपाली को फोन कर कहा,''तुझे आये दस दिन हो गए और मुझे एक फोन तक नहीं की। अरे हाँ...अब मुझे फोन क्यों करेगी..? अब तुझे कोई और दोस्त मिल गया है। साथी मिल गया है। हम सफ़र मिल गया है। खैर। ये बता, मलेशिया घूमने चलेगी क्या..? दरअसल,मुझे कंपनी की तरफ से मलेशिया जाने का ट्रिप मिला है। मेरे साथ चलती, तो अच्छा रहता। अभी मैं घर आ रहा हूँ। दो टिकट फिल्म की लिया हूँ। बहुत दिन हुए तेरे साथ फ़िल्म देखे। देख.. इंकार मत करना।”

रूपाली ने कहा,''मेरी तबीयत ठीक नहीं है। मन नहीं कर रहा है फ़िल्म देखने का। मम्मी के साथ चले जा।”

“मुझे कुछ नहीं सुनना है। तैयार रहना, आ रहा हूँ।”

आकाश आ गया पर, रूपाली तैयार नहीं हुई थी। अराधना के कहने पर मुश्किल से रूपाली आकाश के साथ जाने को तैयार हुई।

रास्ते में आकाश ने कहा,''पहले फ़िल्म चलें या फिर डॉक्टर के पास...?''

रूपाली ने कहा,''पहले लेडी डॉक्टर के पास चलते हैं। उसके बाद फिर देखेंगे कहाँ जाना है।''

''ठीक है,पहले वहीं चलते हैं।''

रूपाली की रिपोर्ट देखकर डॉक्टर रूचि ने कहा,''आपको ब्रेस्ट कैंसर हैं। लेट मत करो। अभी फस्ट स्टेज पर है। कोई खतरे की बात नहीं है। अच्छा होगा कि, कैंसर हॉस्पिटल में दिखा लो।''

''ब्रेस्ट कैंसर हैं..! और अभी तक यह बात छिपा कर रखी थी..!'' आकाश ने हैरान होकर कहा।

डॉक्टर रूचि से सारी बातें समझने के बाद आकाश ने रूपाली से कहा,''ऐसा करते हैं, हम पहले कैंसर हॉस्पिटल चलते हैं। फाइल बनवाते हैं। फिर डॉक्टर से मिलते हैं। आज ही बहुत कुछ हो जाएगा। तुम्हारा पंजीयन हो जाएगा। मेमोग्राफी और ब्लड की रिपोर्ट भी आ जाएगी।''

''मुझे कैंसर है,ये बात मम्मी को नहीं बताई हूँ। तुम्हें पता है..? इस मर्ज़ के इलाज़ में आदमी टूट जाता है। उसका साथ देने वाले भी मरीज़ हो जाते हैं। कैंसर वाले मरीज़ को ढोना पड़ता है। पहले घर चलते हैं। मम्मी से बात करते हैं। मम्मी सुनने पर न जाने कैसा रिएक्ट करेंगी। ये भी नहीं पता कि, इलाज़ में कितने रुपए लगेंगे..? वो क्या कहती हैं तब तय करेंगे कि, क्या करना हैं। अभी इतनी जल्दी खतरे के स्टेज पर नहीं पहुँच जाएगा। पहले घर चलते हैं। मम्मी से बात करते हैं। हमारे पास समय है..।'' रूपाली समझाते हुए आकाश से कही।

''मैं तुम्हारी एक नही सुनूंगा। पहले अस्पताल चलते हैं। वहाँ देखते हैं आज, क्या-क्या हो सकता है। मम्मी को सारी बातें बाद में बता देंगे। ये बताओ,मेरे और तुम्हारे बीच पैसे की बात कहाँ से आ गई..? मुझे अब, अपना बेस्ट फ्रेंड नहीं मानती क्या..?'' आकाश ने हक़ से कहा।

''ऐसा मैने कब कहा, कि तू मेरा बेस्ट फ्रेंड नहीं है। मैं अपनी अंतिम सांस तक, यही कहूंगी कि, तू ही मेरा बेस्ट फ्रेंड है। बस,खुश...! मेरी एक बात मान ले, पहले घर चलते हैं।'' अपनापन जताते हुए रूपाली ने कहा।

''तेरा ये बेस्ट फ्रेंड, आज तेरी बात नहीं सुनेगा। आज मेरी सुनेगी।'' आकाश ने कहा।

रूपाली रास्ते भर सोचती रही,मैं देवेश को अपनी जान समझती रही,लेकिन मेरी जान तो कोई और है...! क्या बेस्ट फ्रेंड ऐसे भी होते हैं..?

कैंसर हॉस्पिटल में एक बेंच में रूपाली बैठी रही और आकाश इधर से उधर दौड़ता रहा। रूपाली का ब्रेस्ट इक्जामिन के बाद डॉक्टर ने मेमोग्राफी,और ब्लड की जाँच लिखा। आकाश ने रूपाली की फाइल डिलेक्स श्रेणी में बनावाया, ताकि जल्द जाँच हो जाए और ऑपरेशन की डेट भी मिल जाए। तीन चार दिन में सारी रिपोर्ट आ गयी।

रूपाली के ऑपरेशन की डेट मिलने के बाद आकाश ने अराधना को फोन पर कहा,''मम्मी जी, आप को एक बात बतानी है..। आप से हमने एक बात छिपाई है..! रूपाली को ब्रेस्ट कैंसर है...! इसलिए उस दिन वो रो रही थी...।''

''ब्रेस्ट कैंसर...? अराधना सुनकर अवाक रह गयी। कुछ देर तक उनके मुंह से आवाज़ नहीं फूटी। फिर अपने को संयमित कर कहा,''हमारे खानदान में किसी को भी ब्रेस्ट कैंसर कभी नहीं हुआ। मुझे भी नहीं है। फिर इसे कैसे हो गया.? ये कब से आयी हुई है, लेकिन मुझे अभी तक बताई क्यों नहीं...? कब पता चला...? किस स्टेज पर है...? डॉक्टर से अभी तक मिली कि नहीं..? मुंबई में रहकर भी इतना लेट,हद हो गई..?''

''फस्ट स्टेज पर है। खतरे वाली बात नहीं है..। रूपाली बात करना चाहती है।''आकाश ने कहा।

''हद कर दी। तुझे कैंसर है। देवेश को पता है, कि नहीं..?'' अराधना ने रूपाली से पूछा।

''हाँ मम्मी। उन्हें सब पता है। उनका नाम मत लो। मैं उनके लिए अब अजनबी हो गयी और वो मेरे लिए..।'' रूपाली चिढ़ कर बोली।

''तुम दोनों के बीच कोई लड़ाई हुई है क्या..? जो इस तरह बोल रही है। ये तो पति- पत्नी के बीच होते रहता है। क्या तेरे पापा और मेरे बीच झगड़ा नहीं होता..? क्या मैं इन्हें छोड़ कर चली गयी या फिर ये मुझे..?''

''आप नहीं समझेंगी मम्मी..! ऐसी बात नहीं है।''

''फिर कैसी बात है...? मुझे जब तक बताएगी नहीं,पता कैसे चलेगा। तुम दोनों के बीच हुआ क्या है..?'' नाराज़गी ज़ाहिर करते हुए अराधना ने कहा।

रूपाली विवश होकर विस्तार से सारी बात बताई। सुनकर अराधना सन्न रह गयी।

"ग़ज़ब कर दिया इस लड़के ने.. । क्या कोई ऐसा भी करता है.? कहती थी, कि देवेश बहुत अच्छा है। मुझे सदा खुश रखेगा। ये क्या..? जो व्यक्ति पत्नी को कैंसर होने पर सैम्पथी दिखाने की बजाय, ऐसा बोले, उससे तो सारी ज़िन्दगी के लिए मुख मोड़ लेना चाहिए..। मेरी बात मान ली होती,तो आज ये दिन देखने को नहीं मिलता..! अपने करियर को किक मारने पर आखिर तुझे क्या मिला..? जिसे कभी रिस्पांस नहीं दी,वो आज तेरे उस पल में काम आया। जहाँ देवेश को होना चाहिए था। मैं कहती थी न,बेस्ट फ्रेंड यदि लाइफ़ पार्टनर हो,तो ज़िन्दगी में हर दिन सबेरा है।"

रूपाली जब तक ऑपरेशन थियेटर से नहीं निकली, आकाश बाहर तकता रहा। उसे कमरे में लाने के आधे घंटे बाद उसे होश आ गया। सामने उसे आकाश दिखा। जो उसके लिए गुलाब के बुके लेकर आया था। आकाश के हाथ में बुके देखकर उसकी आँखें भर आयी।

"अरे! अब रोने के दिन चले गए। ऑपरेशन हो गया और तुम्हें पता भी नहीं चला। अब जल्दी ठीक हो जाओगी। तुम्हें खुश होना चाहिए कि, तुम्हारे साथ पूरा घर, परिवार है।" आकाश ने कहा।

"परिवार! लड़की की शादी के बाद,उसका परिवार सिर्फ ससुराल होता है। लेकिन मेरे ससुराल से मुझे देखने कोई नहीं आया.. आकाश।" रूआँसी होकर रूपाली ने कहा।

"मम्मी को फोन कर दिया है,आती होंगी।"

तभी अराधना जूस,फल,पानी आदि लेकर पहुँची।

आते ही अराधना ने आकाश से कहा,''ऐसा कर, तू सुबह से कुछ खाया भी नहीं है। खाना लाई हूँ, खा ले। रूपाली जूस पी लेगी। अरे हाँ..तूझे मलेशिया जाना था ना..! रूपाली के चक्कर में तेरा जाना केंसल तो नहीं हो गया..?''

"नहीं मम्मी। कंपनी को बता दिया था, अभी नहीं जा सकता। फिर कभी चला जाऊँगा। रूपाली का इलाज़ ज़्यादा ज़रूरी था। आप आ गई हैं.. अब मैं निकलता हूँ। शाम को फिर आ जाऊँगा।" कहकर आकाश चला गया।

कोई ग़ैर अपना बनकर साथ दे या फिर सहयोग करे, तो दर्द खुशबू बनकर दिल में उतर जाता है। रूपाली इस खुशबू को महसूस कर रही थी। वैसे रूपाली का कुछ लगता नहीं आकाश। आकाश के माँ बाप बचपन में ही गुज़र गए थे। वो अपने चाचा और चाची के साथ रहता था। दोनों की कोई औलाद नहीं थी। आकाश को अपने बेटे की तरह पाल कर बड़ा किए। अराधना भी उसे बेहद दुलार और प्यार देती आई हैं। रूपाली और आकाश दोनों साथ-साथ बड़े हुए।

दिल के चूल्हे में इश्क़ की अंगीठी के जलने का पता दिल को तब होता है,जब वो किसी और के लिए सुलगने लगता है। आज रूपाली महसूस कर रही है, कि देवेश उसके लिए नहीं बना है। उसकी साँसें आकाश है। मैं ही उसे पहचानने में ग़लती कर गई...!

वो आकाश और देवेश की तुलना कर रही थी अपने आप में। तभी अराधना ने कहा,'' आकाश की वजह से तेरा इतनी जल्दी ऑपरेशन हो गया। ऐसा लगता है, बचपन में आकाश मेरे हाथों का बना जितना पोहा खाया था। उसने उस नमक का कर्ज़.. आज उतार दिया..।"

''हाँ मम्मी। आपके नमक का कर्ज़ उसने उतार दिया लेकिन.. मुझ पर उसका कर्ज चढ़ गया। आज मैं बेफिक्र होकर सांसें उसकी वजह से ले रही हूँ। देवेश मुझे मरने के लिए छोड़ दिया.। मेरी ज़िन्दगी के होंठ नीले पड़ गए थे। अपनी मेडिकल रिपोर्ट देखकर मेरा दिल बैठ गया था। मेरी उम्र के आकाश से सारे सपनों के परिंदे एकाएक उड़ गए। ज़िन्दगी भी क्या-क्या रंग दिखाती है। देवेश के रिश्ते में मुझे कष्ट मिला.. वहीं दूसरी ओर बेस्ट फ्रेंड के रिश्ते में खुशी मिली।''उदास मन से रूपाली बोली।

"कोई हमारे सपनों के परिंदों को उड़ा देता है। कोई उसे वापस लाने, चुपके से ज़िन्दगी में आ जाता है। मैं कही थी ना... देवेश के लिए अपने करियर को किक मार कर ग़लती कर रही हो। प्यार को बचाए रखने के लिए ज़रूरी है, एक दूसरे में ढलना। एक दूसरे को ट्रस्ट करना..। प्यार शीशा है। जरा सी ठेस पर पहले प्यार का ताज़महल ढहता है। उसके बाद दिल टूटता है..।" अराधना ने कहा।

"देवेश का नाम मत लो मम्मी। जो मुझे मरने के लिए छोड़ दिया हो..उसका नाम लेकर मेरी पीड़ा मत बढ़ाओ। मुझे नई जिन्दगी, बेस्ट फ्रेंड ने दी है। लगता है.. मेरे आँसुओं से उसका कोई रिश्ता है..। आज समझी हूँ,कि कोई जुबां से न बोले..तो इसका मतलब यह नहीं कि, उसके दिल में अपने दोस्त के लिए प्यार और उसकी चाहत की तड़प नहीं है..! अब उसके हिस्से का सावन नहीं रोएगा। न ही उसकी चाहतों का बादल बिछड़ेगा। इस करवा चौथ में चाँद किसके लिए देखूंगी... मैंने तय कर लिया है।"

रूपाली के गालों पर आकाश के लिए प्यार के आँसू लुढ़क आए जो बता रहे थे, मुहब्बत के सावन का कोई महीना नहीं होता। दिल अपनों के लिए...खुशी के आँसू भी रो लेता है।

–सुन्दर नगर बोदाबाग, रीवा,मध्यप्रदेश

मो. 7974304532

साक्षात्कार

डॉ. जसप्रीत कौर 'फ़लक' हिन्दी की सशक्त कवयित्री हैं। उनकी कवितायें केवल काल्पनिक प्रतिबिम्ब नहीं उभारतीं बल्कि यथार्थ के धरातल पर उकेरी हुई आकृति की तरह हैं। रुढ़िवादी परम्पराओं को तोड़ते हुए समाज के सामने नए सवाल खड़े करती हैं। उनकी कविताओं में प्रेम की अभिव्यक्ति और प्राकृतिक सौंदर्य रंग समाहित हैं। सरल भाषा में अपनी अंतर संवेदना में पल्लवित कोमल भावनाओं को सशक्त रूप से काव्य शिल्प के माध्यम से प्रस्तुत करती हैं उसे सुधी पाठक सुगमता से आत्मसात कर सकता है। उनकी कविताएँ जागरूकता के शिखर को तलाशती नज़र आती हैं। उन की कविताओं में विविधता,अदभुत आकर्षण सौन्दर्य और भावनाओं के मर्म को महसूस किया जा सकता है। उन की कविताओं की विशेषता उन की भाषा की सादगी और गहरी अर्थवत्ता है। उन्होंने बड़े धैर्य, अनथक प्रयास और लगन से हिन्दी साहित्य में अपना स्थान सुनिश्चित किया है। उनके अंदर बहती नदी की तरह जो कविता का प्रवाह है उसी का प्रभाव है कि उन्होंने हिंदी साहित्य को चार काव्य संग्रह प्रदान किए हैं। आज बड़ा हर्ष का विषय है उनसे साक्षात्कार करने का सुअवसर मिला है। मैं समझता हूँ कि वह नूतन चेतना की कवयित्री हैं। उनकी भाषा में सुघड़ता एवं परिपक्वता मन-प्राण को सुवासित कर जाती हैं। उनकी कविताएँ नए प्रयोग को जन्म देती हैं एवं पाठक को अंतर्मन में सुखद एहसास का अनुभव कराती हैं। आइये बात चीत का सिलसिला शुरू करते हैं... **–अशोक दर्द**

अशोक दर्द

डॉ. जसप्रीत कौर फ़लक

प्रश्न : कविता आपकी दृष्टि में क्या है ? आप किस रचना को सर्वश्रेष्ठ मानती हैं ? साहित्य का समाज और जन मानस के पटल पर क्या प्रभाव पड़ता है ?

उत्तर : कवि की कल्पना और परिवर्तन प्रयास का रूप है कविता। मेरे अन्दर कल्पनाओं का जो संसार है उन्हें जिन शब्दों का रूप देकर मैं पेश करती हूँ वो कविता है। कविता मेरी संतुष्टि और अभिव्यक्ति का साधन है। कविता आदि काल से मानव को आकर्षित एवं समय-समय पर जागृत करती रही है। मेरी दृष्टि में कविता समाज में बदलाव लाने का एक सशक्त माध्यम है।

अगर मैं आपके सवाल का संक्षिप्त में उत्तर देना चाहूँ तो मैं समझती हूँ जो साहित्य समाज के हित में हो वही सर्वश्रेष्ठ है। जिस में जीवन की संवेदनाओं को परिभाषित करने की क्षमता हो, भावी पीढ़ी की राहें सशक्त करने की संभावनाए हों - अस्ल में वही साहित्य है जो आप को कुछ सोचने पर विवश करें।

प्रश्न : आप प्रभावशाली कवयित्री हैं आप ने कविता को लिखा ही नहीं उसे जिया भी है आप कविता को किन परिस्तिथियों में रचती हैं ?

उत्तर : देखिए कविता केवल निजी अनुभव नहीं होती। कविता कई कारणों से मन मस्तिष्क पर दस्तक देती है।

जैसे नारी वेदनाओं का आहत होना, अन्याय, उपेक्षित और समाज की अस्तव्यस्ता, कुरीतियाँ कविता के जन्म का विषय बनते हैं। जहाँ तक मेरा सवाल है जीवन की प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण ही मेरे अन्दर विचारों का, शब्दों का ज्वार भाटा फूटा। मैं अपनी अभिव्यक्ति को कोई रूप देने के लिए कविता की तरफ़ मुड़ती चली गई। कविता ने मेरे अन्दर अद्भुत बदलाव किए। जीवन को समझने में कविता मेरी मददगार साबित हुई। कविता मुझे हमेशा आकर्षित एवं प्रभावित करती रही।

प्रश्न : साहित्य की कई विधाएं हैं किन्तु आपने कविता को ही अपना आधार- स्तम्भ क्यूँ बनाया ?

उत्तर : साहित्य में अनेक विधाएं हैं उनका अपना अलग ही सौंदर्य है। किन्तु अन्य विधाओं में भावों की अभिव्यक्ति करने का एक सीमित दायरा होता है,बंदिश होती है। किन्तु कविता एक ऐसी विधा है जिसमें हम अपने भावों एवं कल्पनाओं की अभिव्यक्ति असीमित दायरे में कर सकते हैं। कविता शब्दों का ऐसा खेल है जिसमें जड़,चेतन,अतीत,वर्तमान और भविष्य सभी उपकरण मात्र हैं। कविता के माध्यम से हम प्रभावपूर्ण और चमत्कारपूर्ण शब्दों के द्वारा अपने कथ्य को प्रस्तुत करने का प्रयास कर सकते हैं। इसी लिए कविता को अपने सृजन कर्म में मैं हमेशा प्राथमिकता देती हूँ। कविता में अपना ही सहज सौंदर्य होता है। जिस कारण मैं सहजता से अपने भावों को भली-भाँति व्यक्त कर सकती हूँ।

प्रश्न : आप प्राकृतिक को बड़ी भावनात्मक दृष्टि से देखती हैं। आपकी अधिकतर रचनाओं में प्राकृतिक सौंदर्य के रंग एवं यथार्थ की झलक है। आप कविता की सृजन प्रक्रिया को क्या और कैसे महसूस करती हैं ?

उत्तर : आप के इस सवाल का उत्तर देने से पहले मैं अपनी चार पंक्तियाँ प्रस्तुत करना चाहूँगी-

"पतझड़ को मधुमास नहीं लिख पाऊँगी
शंका को विश्वास नहीं लिख पाऊँगी
सच्चाई के बीच रही हूँ जीवन भर
मैं झूठा इतिहास नहीं लिख पाऊँगी"

साहित्य सृजन का कार्य केवल कोरे सिद्धांतों या वैचारिक आदर्शों की प्रेरणा से नहीं, बल्कि कवि की वास्तविक सर्जनात्मक अनुभूति से होता है। जहाँ विचार मन की सर्वश्रेष्ठ क्रिया हैं और जब उसकी रचनात्मक ऊर्जा की परिधि में संवेदना का संचार होता है। तब, कहीं जाकर वह भीतर और बाहर की दुनिया से जुड़ पाता है। सृजन प्रक्रिया की पहली शर्त यह है कि हमें उसका कोई भार नहीं लगता। जिस प्रकार पंक्षी अपने परों से स्वच्छंद आकाश में विचरण करता है उसी प्रकार साहित्यकार 'स्वान्तः सुखाय' और 'लोक हिताय' के दो पंखों पर अपनी काव्य यात्रा का गणित बैठाता है।

प्रश्न : आने वाले दिनों में आपकी भावी योजनाएं क्या हैं ?

उत्तर : साहित्य के सफ़र में कोई विशेष योजनाएं बना कर नहीं चला जाता है। समय के अनुरूप योजनाएं बनतीं और बदलती रहती हैं। आने वाले दिनों में मैं अपने लेखन को और अधिक परिष्कृत करने पर ध्यान देना चाहती हूँ। बहुत सी बिखरी हुई रचनाओं को संग्रहित कर के एक नए काव्य संग्रह के रूप में प्रस्तुत करने की योजना है। नये अनुभवों से समाज में साहित्य चेतना जगाने में प्रयास करूँगी।

प्रश्न : प्रत्येक लेखक के लेखन प्रक्रिया पर सामाजिक, राजनीतिक घटनाओं का भी प्रभाव होता है। क्या आप भी इसी प्रकार का प्रभाव महसूस करती हैं ?

उत्तर : जी बिलकुल, कवि हृदय संवेदनशील एवं कोमल होता है। शाख़ से फूल का टूटना भी उसके हृदय को विचलित करता है। आप तो बड़ी घटनाओं की चर्चा कर रहे हैं। कवि की लेखन प्रक्रिया पर किसी भी प्रमुख घटना का प्रभाव होना स्वाभाविक है। कवि हर घटना को जन मानस से हट कर देखता है। एक कवि को अपनी कल्पना के अतिरिक्त जो उसके आस-पास घटित होता है उसे लिखना अत्यंत आवश्यक है।

प्रश्न : हाल ही में आपके कविता संग्रह का लोकार्पण समारोह आयोजित किया गया था। इस संग्रह की काफी चर्चा हो रही है। क्यों ?

उत्तर : गत दिनों मेरे कविता संग्रह "कैनवस के पास" का लोकार्पण समारोह आयोजित किया गया। मेरा सौभाग्य है कि मेरा पाठक वर्ग हमेशा रहा है। शायद सुधीजन पाठक उसकी तरफ़ इसलिए आकर्षित हुए इसकी भावनात्मक गहराई, संवेदनशील अभिव्यक्ति और जीवन के विविध रंगों को दर्शाने वाली कविताएँ

हैं। पाठकों को इसमें अपनी भावनाओं का प्रतिबिंब दिखाई देता है। शायद इसी वजह से इससे गहराई से जुड़ाव महसूस कर रहे हैं।

प्रश्न : आपकी साहित्य जगत की सबसे बड़ी उपलब्धि क्या रही, जिसे पाकर आपने सबसे अधिक ख़ुशी महसूस की ?

उत्तर : मुझे सबसे अधिक प्रसन्नता तब हुई जब मुझे यह सूचना मिली कि NEP शिक्षा नीति के निर्देशानुसार मेरी कविता 'बचपन' को पाँचवीं कक्षा की "नयी नुहार" अभ्यास पुस्तिका में शामिल किया गया है।

प्रश्न : इन्हीं दिनों प्रख्यात कवि श्री विनोद कुमार शुक्ल जी को भारतीय ज्ञान पीठ सम्मान(हिन्दी भाषा) से पुरस्कृत किया गया है। आप कवयित्री होने के नाते उनको मिले इस सम्मान पर क्या प्रतिक्रिया व्यक्त करना चाहेंगी ?

उत्तर : मैं समझती हूँ विनोद कुमार शुक्ल जी को भारतीय ज्ञानपीठ सम्मान मिलना समकालीन हिंदी साहित्य के लिए एक ऐतिहासिक और हृदयस्पर्शी क्षण है। उनकी सृजनशीलता, सादगी भरी गहनता और शब्दों में रची-बसी मानवीय संवेदनाएँ साहित्य के प्रति उनकी अप्रतिम साधना का प्रमाण हैं।

उन के लेखन से नये लिखने वालों को प्रेरणा लेनी चाहिए- विनोद जी के पास जटिल समय को सरल शब्दों में अभिव्यक्त करने की अद्भुत कला है उन्होंने साधारण जीवन की असाधारण संवेदनाओं को जिस प्रकार उकेरा है वह अविस्मरणीय है। एक कवयित्री होने के नाते अपना कर्तव्य समझते हुए मैं उन्हें इस उपलब्धि पर हृदय नितल से बधाई देती हूँ।

प्रश्न : आपके पास साहित्य का विशेष अनुभव हैं। आप नए रचनाकारों को क्या संदेश देना चाहेंगी ?

उत्तर : नए रचनाकारों के लिए मेरा संदेश यही होगा कि वे लेखन को केवल प्रसिद्धि का माध्यम न बनाएँ, बल्कि इसे अपने विचारों और भावनाओं की सशक्त अभिव्यक्ति का माध्यम समझें। निरंतर पढ़ते रहें, अभ्यास करते रहें और धैर्य बनाए रखें। साहित्य एक साधना है, जिसमें निखार समय और समर्पण से आता है। सच्ची अभिव्यक्ति और मौलिकता ही एक रचनाकार को विशेष बनाती है।

अशोक दर्द
वरिष्ठ साहित्यकार एवं समीक्षक
गाँव-घाट-पोस्ट ऑफिस - शेरपुर
तहसील - डलहौजी, जिला - चम्बा 176306
हिमाचल प्रदेश
मो. 9418248262

डॉ. जसप्रीत कौर फ़लक
मकान न. 11 सैक्टर 1-A गुरू ग्यान विहार, डुगरी,
लुधियाना, पंजाब, पिन - 141003
मो. 9646863733
ई मेल- jaspreetkaurfalak@gmail.com

सुविचार

ज़िन्दगी में हम कितने सही हैं
और कितने गलत हैं,
ये सिर्फ दो ही जानते हैं,
परमात्मा और अपनी अंतरात्मा

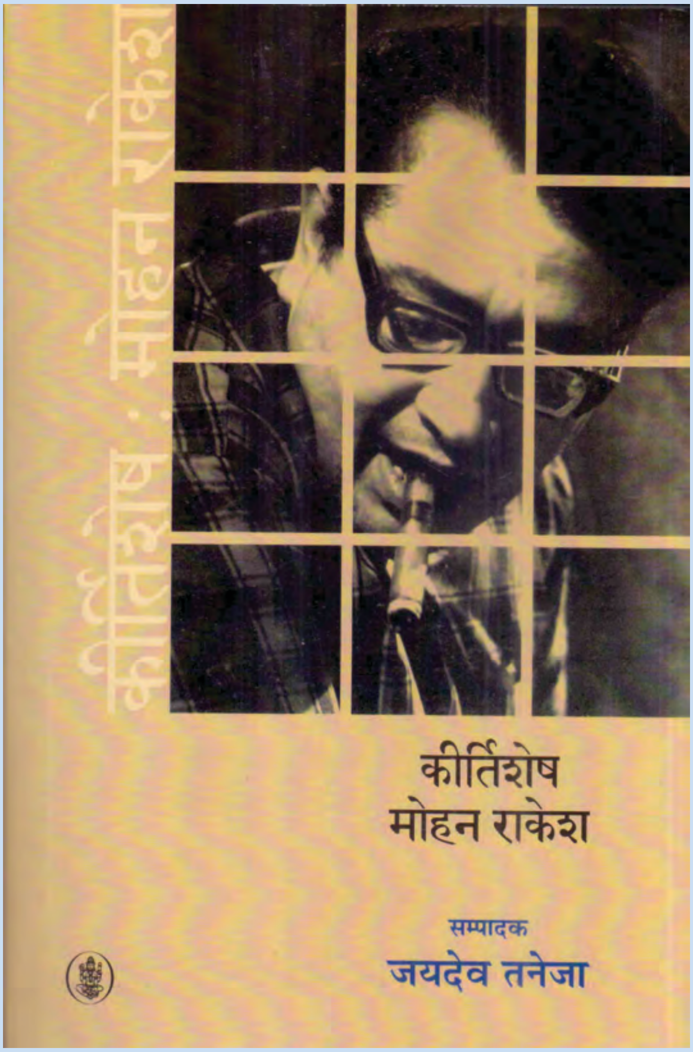

तो आप लिखते कब हैं ?

किसी ने राकेश से उसकी दिनचर्या के विषय में पूछा। राकेश ने सुबह से सुबह तक का अपना कार्यक्रम बताया :

'देखिए, दस बजे नींद खुलती है। सवा दस तक बेड टी लेते हैं। नहाकर नाश्ता करने तक बारह सवा बारह बज जाते हैं। नाश्ते के बाद डाक देखते हैं, पत्रों के उत्तर देते हैं। साढ़े तीन-चार के क़रीब दोपहर का भोजन करके कुछ देर सुस्ता लेते हैं। तब तक बाहर निकलने का वक़्त हो जाता है। शाम के सात से रात के ग्यारह बजे तक दोस्तों की महफ़िल चलती है– हँसने-हँसाने और पीने-पिलाने में वक्त गुज़रने का पता ही नहीं चलता। लौटकर खाना खाने में डेढ़-दो बज जाते हैं। तभी घंटा-डेढ़ घंटा कुछ पढ़ा जाता है और पढ़ते-पढ़ते नींद आ जाती है। उसके बाद फिर वही दस बजे आँख खुलती है।'

'तो आप लिखते कब हैं ?' इस पर पूछा गया। राकेश ने मुस्कराकर उत्तर दिया, 'कल ।'

पुस्तकांश पृष्ठ 292

आवरण परिकल्पना : राधाकृष्ण स्टूडियो
राधाकृष्ण पेपरबैक्स
e-BOOK
उपलब्ध
संस्मरण
₹499
9 789348 157607
www.radhakrishnaprakashan.com

कुमार शिव जी की बेहतरीन कविता

तुमने छोड़ा शहर
धूप दुबली हुई
पीलिया हो गया है 'अमलतास' को

बीच में जो हमारे ये दीवार थी
पारदर्शी इसे वक्त ने कर दिया
शब्द तुम ले चलीं गुनगुनाते हुए
मैं संभाले रहा रिक्त ये हाशिया

तुमने छोड़ा शहर
तम हुआ चम्पई
नीन्द आती नहीं है हरी घास को

अश्वरथ से उतर कर रुका द्वार पर
पत्र अनगिन लिए सूर्य का डाकिया
फिर मेरा नाम ले कर पुकारा मुझे
दूरियों के नियम फेंक कर चल दिया

तुम ने छोड़ा शहर
उड़ रही है रुई
ढक रहे फूल सेमल के आकाश को

दौड़ता ही रहा अनवरत मैं यहाँ
तितलियों जैसे क्षण हाथ आए नहीं
जिन्दगी का उजाला छिपा ही रहा
दिन ने मुख से अंधेरे हटाए नहीं

तुमने छोड़ा शहर
याद बन कर जूही
फिर से महका रही घर की वातास को

भीड़ के इस समन्दर में हम अजनबी
एक अदृश्य बंधन में बंध कर रहे
जंगलों में रहे, पर्वतों में रहे
हम जहाँ भी रहे कोरे कागज रहे

तुमने छोड़ा शहर
नाव तट से खुली
शंख देखा किए रेत की प्यास को
तुमने छोड़ा शहर
धूप दुबली हुई
पीलिया हो गया है 'अमलतास' को।

प्रस्तुति : डॉ. जयदेव तनेजा
नई दिल्ली,
मो. 98995 47647

RNI NO. DELHIN/2012/40913 | प्रेषक : बी–3/3223, बसंतकुंज, नई दिल्ली 110070, मो. 09910497972